कैनेडा से प्रकाशित साहित्यिक पत्रिका

वसुधा

Year 14, Issue 56
Oct.-Dec., 2017

VASUDHA A CANADIAN PUBLICATION

EDITOR-PUBLISHER : Dr. Sneh Thakore - Awarded By The President Of India
Limka Book Record Holder

संपादन व प्रकाशन
डॉ. स्नेह ठाकुर
भारत के राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत
लिम्का बुक रिकॉर्ड होल्डर

वर्ष १४ - अंक ५६, अक्टूबर-दिसम्बर २०१७

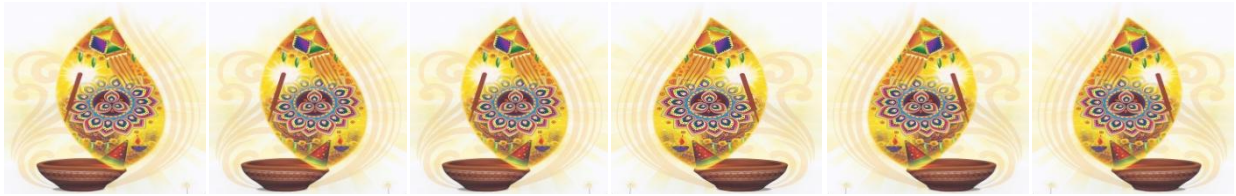

दिवाली कब होती है ?

अटलबिहारी वाजपेयी

जब मन में हो मौज बहारों की
चमकाएँ चमक सितारों की,
जब ख़ुशियों के शुभ घेरे हों
तन्हाई में भी मेले हों,
आनंद की आभा होती है
उस रोज़ 'दिवाली' होती है.

जब प्रेम के दीपक जलते हों
सपने जब सच में बदलते हों,
मन में हो मधुरता भावों की
जब लहके फ़सलें चावों की,
उत्साह की आभा होती है
उस रोज़ दिवाली होती है.

जब प्रेम से मीत बुलाते हों
दुश्मन भी गले लगाते हों,
जब कहीं किसी से वैर न हो
सब अपने हों, कोई ग़ैर न हो,
अपनत्व की आभा होती है
उस रोज़ दिवाली होती है.

जब तन-मन-जीवन सज जाएँ
सद्-भाव के बाजे बज जाएँ,
महकाए ख़ुशबू ख़ुशियों की
मुस्काएँ चंदनिया सुधियों की,
तृप्ति की आभा होती है
उस रोज़ 'दिवाली' होती है.

वसुधा

संपादन व प्रकाशन : डॉ. स्नेह ठाकुर

(पोस्ट-डॉक्टरल फ़ेलोशिप अवार्डी)

भारत के राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्रपति भवन में "हिन्दी सेवी सम्मान" से सम्मानित

शीर्षक	रचयिता	पृष्ठ
संपादकीय		२
श्री अटल बिहारी वाजपेयी	अनिता शर्मा	४
दीपावली : पाँच अनुभव	देवराज	७
आलोकपर्व की ज्योतिर्मय देवी	आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी	८
भारतवर्ष	मैथिलीशरण गुप्त	११
प्रेम-नेम	ओम प्रकाश मिश्र	१२
द्युति की कली	गजानन माधव मुक्तिबोध	१६
क्यों?	डॉ. मुक्ता	१७
यह सब क्या है?	डॉ. रमेश सक्सैना 'गश देहलवी'	१८
लाला लाजपत राय को शत-शत नमन	प्रवासी दुनिया से साभार	१९
हिन्दी भाषा : एक राष्ट्रीय पहचान	आनन्द दास	२१
निलम्बन	डॉ. कविता त्यागी	२३
ग़ज़ल	प्राण शर्मा	३१
राम, कृष्ण और शिव	डॉ. राम मनोहर लोहिया	३२
श्री दुर्गाष्टोत्तर नाम स्त्रोत	संजीव वर्मा 'सलिल'	४३
दीवाली कब होती है?	अटल बिहारी वाजपेयी	१अ
डॉ. स्नेह ठाकुर का रचना संसार		४४अ

रचनाओं में निहित विचार तथा मन्तव्य रचनाकारों के निजी विचार तथा मन्तव्य हैं। 'वसुधा' रचनाकारों के विचारों के लिए उत्तरदायी नहीं है। प्रकाशक की आज्ञा बिना कोई रचना किसी प्रकार उद्धृत नहीं की जानी चाहिए। प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाएगा।

रचनाएँ भेजने के लिए सम्पर्क पता :

16 Revlis Crescent, Toronto, Ontario M1V-1E9, Canada. TEL. 416-291-9534

वार्षिक शुल्क Annual subscription.....$25.00, भारत - रु. ६००.००

डाक द्वारा By Mail, Canada & USA.....$35.00, Other Countries.....$40.00

Website: http://www.Vasudha1.webs.com

e-mail: dr.snehthakore@gmail.com

संपादकीय

सौभाग्यवश, जब भारत के प्रधान मंत्री ऑफिस से मुझे अपने विचार व्यक्त करने हेतु कहा गया तो जो पत्र मैने लिखा वह वसुधा के प्रिय पाठकों से साझा कर रही हूँ -

"भारत के प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी जी,

सर्वप्रथम प्रवासी भारतीय कनेडियन की ओर से प्रधान मंत्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी जी को जिन्होंने कैनेडा, अमेरिका, यू.एन. में गर्वपूर्वक हिन्दी में भाषण दे हम प्रवासी भारतीयों का मस्तक गर्वोन्नत किया, साथ ही भोपाल में "विश्व हिन्दी सम्मान" प्राप्त करते हुए मैंने आपको उद्घाटन समारोह में सुना; अत: आपकी हिन्दी के प्रति निष्ठा को नमन करते हुए स्वतंत्रता दिवस की अनेकानेक शुभकामनाएँ एवं बधाई. अनेकों वर्षों के उपरांत यह सुखद आभास हुआ कि हमारी तथाकथित राष्ट्रभाषा, राजभाषा हिन्दी जो पद-दलित हो नौकरानी के स्तर पर पहुँच गई थी, अपने यथास्थान राजसिंहासन पर पदासीन होने की प्रक्रिया में है.

भारत से बाहर जब हमसे पूछा जाता है कि, "सब देशों की राष्ट्रभाषा है, पर भारत की कोई राष्ट्रभाषा नहीं है", तो हम स्वयं को संयत कर, स्वर में कुछ गर्वीला डींग वाला पुट ला, कहने को तो कह देते हैं कि, "अरे! हमारी तो एक नहीं वरन् १४ से बढ़कर २२ और अब तो २८ राजभाषाएँ हैं", पर उस चुभन को नहीं भुला पाते कि राजभाषा हिन्दी जिसने हर प्रकार से - स्वतंत्रता की लड़ाई के समय व आज भी देश की राष्ट्रभाषा बनने के प्रति अपनी उपयोगिता, सामर्थ्यता, सक्षमता सिद्ध की है - राष्ट्रभाषा के पद पर पदासीन नहीं हो पाई.

किसी भी देश की सभ्यता व संस्कृति अपनी राष्ट्रभाषा के बिना अधूरी है, गूँगी है. हम अपनी संस्कृति का निर्वहन अपनी भाषा में ही कर पाएँगे, विदेशी भाषा में नहीं. हाँ! अनेकों विदेशी भाषाओं का ज्ञान कुछ संदर्भों में अवश्य ही उपयोगी एवं लाभकारी है.

हिन्दी की गंगारूपी धारा में जब क्षेत्रीय, प्रांतीय भाषाओं, बोलियों रूपी सहोदरी नदियों की धारा सम्मिलित होगी तभी हिन्दी उनसे समृद्ध हो,परिपक्व हो, एक रूप हो, पूरे देश की भाषा के रूप में राष्ट्रभाषा पद पर सम्मानित हो, अनूठी भारतीय संस्कृति की सुगंध विश्व के कोने-कोने में बिखरा सकेगी.

५० वर्षों के अपने इस कैनेडा आवास में, पिछले कुछ वर्षों में प्रकाशित अपनी अनेक पुस्तकों, विषेशरूप से साहित्य अकादमी म.प्र. से सम्मानित "कैकेयी चेतना-शिखा" (दो संस्करण प्रकाशित), "लोक-नायक राम" (तृतीय संस्करण प्रकाशनाधीन), "नाकंडा अम्माँ" (चतुर्थ संस्करण प्रकाशनाधीन) और हाल ही में "अंतर्राष्ट्रीय सहयोग परिषद् भारत" की कॉन्फ्रेंस में लोकार्पित अपने नवीनतम उपन्यास "श्रीरामप्रिया सीता" एवं "वसुधा" हिन्दी साहित्यिक पत्रिका के कैनेडा से संपादन-प्रकाशन द्वारा तथा अपनी चित्र-कला द्वारा भी माँ सरस्वती की उपासना करते हुए हिन्दी और भारतीय संस्कृति के प्रचार-प्रसार, उन्नयन में संलग्न हूँ. भारत के राष्ट्रपति माननीय श्री प्रणव मुखर्जी द्वारा "हिन्दी सेवी सम्मान" प्राप्त कर इस दिशा में और भी उत्साहित हुई हूँ.

माननीय प्रधानमंत्री जी, आपसे विनम्र निवेदन है कि आप जिस मनोयोग से अभी तक हिन्दी भाषा और संस्कृति के उन्नयन में कर्मशील हैं उसी प्रकार से भविष्य में भी इसे तवज्जो देते रहें. मेरे जैसे

सामान्य, साधारण व्यक्ति के प्रयास से कहीं ज़्यादा भारत का प्रधानमंत्री पद इस कार्य को करने में सक्षम है; और आप, भारत के प्रधान मंत्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी जी इस दिशा में सदैव प्रेरित रहें, इसी शुभाकांक्षा के साथ,

सादर, सस्नेह,

स्नेह ठाकुर"

सभी शुभचिंतकों की शुभाकांक्षाओं से मेरे उपन्यास "लोक-नायक राम" का तृतीय संस्करण व आदरणीय एवं प्रिय अम्माँ की अध्यात्मिक जीवनी "नाकंडा अम्माँ" का चतुर्थ संस्करण प्रकाशित हुआ. सभी शुभाकांक्षियों के प्रति आभार.

दीये से दीया जलाता चल
कर अपने मन में उजाला
दूसरों को उजाला देता चल
मन के तम को हरने वाला दीप जलाता चल
दीये से दीया जलाता चल.
बना ले लौ की ऐसी पंक्ति संसार में
जगमगा उठे हर घर-द्वार
न टूटे कभी लौ की कड़ी
जलती रहे अविरल, अखण्ड
दीये से दीया जलाता चल.
दीपावली की साँझ को
उठा ले तू बीड़ा निष्काम कर्म का
जला कर अपने मन का दीया
हर बुझे दीये को जलाता चल
हर चिराग में रोशनी करता चल
दीये से दीया जलाता चल.

दीपावली जहाँ आलोक-पर्व है वहीं शिक्षाप्रद पर्व भी. श्रीराम के उच्चतम, आदर्शमय गुणों की गुण-गाथा है. बुराई पर अच्छाई की विजय है. एक छोटा-सा प्रज्वलित दीया भी आपको महत्वपूर्ण शिक्षा प्रदान करता है. दीया यह नहीं कहता कि मैं किसी विशेष को ही प्रकाश दूँगा, सबको नहीं. उसके प्रकाश की परिधि में आने वाले सभी उसके प्रकाश से लाभान्वित होते हैं. दीपावली में तो असंख्य प्रज्वलित दीये मानव-मार्ग प्रशस्त करते हैं. प्रकाश के उस अपूर्व भंडार के एक छोटे-से दीये से भी यदि हर मानव शिक्षा ग्रहण कर ले कि 'देना' 'लेने' से बढ़कर 'आत्म-तुष्टि' का माध्यम है, तो मानव-जीवन सार्थक हो जाए. महानता इसमें नहीं कि आप क्या हैं, महानता इसमें है कि आप क्या दे रहे हैं. प्रेमपूर्ण हृदय ही सबके प्रति प्रेमपूर्ण होता है, और ऐसा प्रेम-परिपूर्ण हृदय ही विश्व से घृणा का साम्राज्य समाप्त करने में समर्थ होगा. आइये, दीपावली की मंगलकामनाओं को आगे बढ़ाते हुए नव वर्ष हेतु संकल्प लेकर हृदय से घृणा को विलीन कर उसका अस्तित्व ही समाप्त कर दें. घृणा विदा हुई तो क्रोध स्वयमेव ही हृदय से विदा हो जाएगा. जहाँ चित्त से क्रोध विदा हो जाए और जहाँ प्राण सर्वमांगल्य हेतु प्रार्थना से परिपूर्ण हों, वहाँ शैतान का अस्तित्व कैसे बचेगा? इसी परिपूर्णता की ओर अग्रसर....तमसो मा ज्योतिर्गमय....

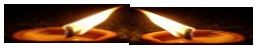
सस्नेह, स्नेह ठाकुर
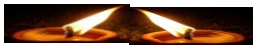

श्री अटल बिहारी वाजपेयी

(माननीय, आदरणीय एवं प्रिय श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी के जन्मदिन पर शुभेच्छाओं, शुभाकांक्षाओं सहित - संपादक)

अनिता शर्मा

राष्ट्रीय क्षितिज पर स्वच्छ छवि के साथ अजातशत्रु कहे जाने वाले कवि एवं पत्रकार, सरस्वती पुत्र अटल बिहारी वाजपेयी, एक व्यक्ति का नाम नही है वरन् वो तो राष्ट्रीय विचारधारा का नाम है। राष्ट्रहित एवं राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रबल पक्षधर अटल जी राजनेताओं में नैतिकता के प्रतीक हैं।

अटल जी का जन्म 25 दिसम्बर 1924 को ब्रह्ममुहर्त में ग्वालियर में हुआ था। मान्यता अनुसार पुत्र होने की खुशी में जहाँ घर में फूल की थाली बजाई जा रही थी तो वहीँ पास के गिरजाघर में घंटियों और तोपों की आवाज के साथ प्रभु ईसामसीह का जन्मदिन मनाया जा रहा था। शिशु का नाम बाबा श्यामलाल वाजपेयी ने अटल रखा था। माता कृष्णादेवी दुलार से उन्हे अटल्ला कहकर पुकारती थीं।

पिता का नाम पं. कृष्ण बिहारी वाजपेयी था। वे हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी तीनो भाषा के विद्वान थे। पं. कृष्णबिहारी वाजपेयी ग्वालियर राज्य के सम्मानित कवि थे। उनके द्वारा रचित ईश प्रार्थना राज्य के सभी विद्यालयों में कराई जाती थी। जब वे अध्यापक थे तो डॉ. शिवमंगल सिहं सुमन उनके शिष्य थे। ये कहना अतिश्योक्ति न होगी कि अटल जी को कवि रूप विरासत में मिला है।

अटल जी की शिक्षा-दिक्षा ग्वालियर में ही सम्पन्न हुई। 1939 में जब वे ग्वालियर के विक्टोरिया कॉलेज में अध्ययन कर रहे थे तभी से राष्ट्रीय स्वंय संघ में जाने लगे थे। अपने मित्र श्री खानवलकर के साथ प्रत्येक रविवार को आर्यकुमार सभा के कार्यक्रमों में भाग लेते थे। वहीं उनकी मुलाकात शाखा के प्रचारक नारायण जी से हुई। अटल जी उनसे बहुत प्रभावित हुए और रोज शाखा जाने लगे। 1942 में लखनऊ शिविर में अटल जी ने अपनी कविता हिन्दु तन-मन, हिन्दु जीवन, जिस ओजस्वी और तेजस्वी शैली में पढी थी उसकी चर्चा लोग आज भी करते हैं। तब कौन जानता था कि अटल जी एक दिन भारत के प्रधानमंत्री बनेगें।

राष्ट्र के उच्चकोटि के वक्ता अटल जी का भाषण सुनने के लिए दूर-दूर से लोग आते थे। उनका भाषण उनकी पहचान है। भाषण के बीच में व्यंग्य विनोद की फुलझड़ियाँ श्रोताओं के मन में कभी मीठी गुदगुदी उत्पन्न करती है, तो कभी ठहाकों के साथ हँसा देती है। अपने पहले भाषण का जिक्र करते हुए अटल जी कहते हैं कि मेरा पहला भाषण जब मैं कक्षा पाँचवी में था तब रट कर बोलने गया था और मैं बोलने में अटक रहा था, मेरी खूब हँसाई हुई थी। तभी से मैने संकल्प लिया था कि रट कर भाषण नही दूँगा। अपनी उच्चकोटि की भाषण प्रतिभा से वे कई बार वाद-विवाद प्रतियोगिता में विजयी रहे।

अटल जी स्वादिष्ट भोजन के प्रेमी हैं। मिठाई तो उनकी कमजोरी रही है। काशी से जब चेतना दैनिक का प्रकाशन हुआ तो अटल जी उसके संपादक नियुक्त किये गये। शाम को प्रेस से लौटते समय राम-भंडार नामक मिठाई की दुकान पड़ती थी। उस दुकान के मीठे परवल सभी को बहुत पसंद थे। अटल जी को तो बहुत पसंद थे किन्तु उस समय इतने पैसे नही हुआ करते थे कि रोज खाया जाए, तो दुकान से कुछ पहले ही कहने लगते थे कि आँखे बन्द कर लो वरना ये परवल सामने आकर बड़ी पीड़ा देंगे। उनकी इस विनोद भरी बातों से सभी हँसने लगते थे। उनका ये विनोदी स्वभाव विपरीत परिस्थिति में उन्हे सहज रखता है।

उन्होंने लम्बे समय तक राष्ट्रधर्म, पांचजन्य और वीर अर्जुन आदि राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत अनेक पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया। ये निर्विवाद सत्य है, कि अटल जी नैतिकता का पर्याय हैं। पहले कवि और साहित्कार तद्पश्चात राजनीतिज्ञ हैं। उनकी इंसानियत कवि मन की कायल है। नैतिकता को सर्वोपरि मानने वाले अटल जी कहते हैं कि-

छोटे मन से कोई बड़ा नही होता,
टूटे मन से कोई खड़ा नही होता।
मन हार कर मैदान नही जीते जाते,
न मैदान जीतने से मन ही जीता जाता है।

अटल जी एक सच्चे इंसान और लोकप्रिय जननायक हैं। वसुधैव कुटुम्बकम की भावना से परिपूर्ण, सत्यम-शिवम्-सुन्दरम् के पक्षधर अटल जी का सक्रिय राजनीति में पदार्पण 1955 में हुआ था। जबकि वे देशप्रेम की अलख को जागृत करते हुए 1942 में ही जेल गए थे। सादा जीवन उच्च विचार वाले अटल जी अपनी सत्यनिष्ठा एवं नैतिकता की वजह से अपने विरोधियों में भी अत्यन्त लोकप्रिय रहे हैं। 1994 में उन्हे 'सर्वश्रेष्ठ सांसद' एवं 1998 में 'सबसे ईमानदार व्यक्ति' के रूप में सम्मानित किया गया है। 1992 में "पद्मविभूषण" जैसी बड़ी उपाधि से अलंकृत अटल जी को 1992 में ही 'हिन्दी गौरव' के सम्मान से सम्मानित किया गया है। अटल जी ही पहले विदेश मंत्री थे जिन्होंने संयुक्त राष्ट्र संघ मे हिन्दी में भाषण देकर भारत को गौरवान्वित किया था और राष्ट्रीय भाषा हिन्दी का मान बढाया। अपनी कविता के माध्यम से कहते हैं -

गूँजी हिन्दी विश्व में,
स्वप्न हुआ साकार।
राष्ट्र संघ के मंच से,
हिन्दी का जयकार।
हिन्दी का जयकार,
हिन्द हिन्दी में बोला।
देख स्वभाषा प्रेम,
विश्व अचरज से डोला।

वे भारतीय जनसंघ की स्थापना करने वालों में से एक हैं और 1968 से 1973 तक उसके अध्यक्ष भी रहे। उन्होंने अपना जीवन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक के रूप में आजीवन अविवाहित रहने का संकल्प लेकर प्रारम्भ किया था और उस संकल्प को पूरी निष्ठा से आज तक निभाया।

सन् 1955 में उन्होंने पहली बार लोकसभा चुनाव लड़ा, परन्तु सफलता नहीं मिली। लेकिन उन्होंने हिम्मत नहीं हारी और सन् 1957 में बलरामपुर (उत्तर प्रदेश) से जनसंघ के प्रत्याशी के रूप में विजयी होकर लोकसभा में पहुँचे। सन् 1957 से 1977 तक जनता पार्टी की स्थापना तक वे बीस वर्ष तक लगातार जनसंघ के संसदीय दल के नेता रहे। मोरारजी देसाई की सरकार में सन् 1977 से 1979 तक विदेश मन्त्री रहे और विदेशों में भारत की छवि को निखारा। लोकतन्त्र के सजग प्रहरी अटल बिहारी वाजपेयी ने सन् 1997 में प्रधानमन्त्री के रूप में देश की बागडोर सँभाली। 19 अप्रैल, 1998

को पुनः प्रधानमन्त्री पद की शपथ ली और उनके नेतृत्व में 13 दलों की गठबन्धन सरकार ने पाँच वर्षों में देश के अन्दर प्रगति के अनेक आयाम छुए। वाजपेयी राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन सरकार के पहले प्रधानमन्त्री थे जिन्होने गैर काँग्रेसी प्रधानमन्त्री पद के 5 साल बिना किसी समस्या के पूरे किए। उन्होंने 24 दलों के गठबंधन से सरकार बनाई थी जिसमें 81 मन्त्री थे। कभी किसी दल ने आनाकानी नहीं की। इससे उनकी नेतृत्व क्षमता का पता चलता है। वर्तमान युग में भगवद्गीता की पंक्तियों का अनुसरण करके चल रहे हैं - **कर्मण्यवाधिकारस्ते माँ फलेषु कदाचनः**

परमाणु शक्ति सम्पन्न देशों की संभावित नाराजगी से विचलित हुए बिना उन्होंने अग्नि-दो और परमाणु परीक्षण कर देश की सुरक्षा के लिये साहसी कदम भी उठाये। सन्1998 में राजस्थान के पोखरण में भारत का द्वितीय परमाणु परीक्षण किया जिसे अमेरिका की सी०आई०ए० को भनक तक नहीं लगने दी।

अटल जी नेहरु युगीन संसदीय गरिमा के स्तंभ हैं। आज अटल जी करोङों लोगों के लिए विश्वसनीयता तथा सहिष्णुता के प्रतीक हैं। जननायक अटल जी का उदार मन, आज की गला काट संस्कृति से परे सदैव यही कामना करता है किः-

मेरे प्रभु,

मुझे कभी इतनी ऊँचाई मत देना,

गैरों को गले न लगा सकूँ,

इतनी रुखाई कभी मत देना।

आत्मीयता की भावना से ओत-प्रोत, विज्ञान की भी जय जयकार करने वाले, लोकतंत्र के सजग प्रहरी, राजनीति के मसीहा अटल जी को ईश्वर स्वस्थ दीर्घायु प्रदान करे यही प्रार्थना करते हैं और २५ दिसंबर को आने वाले उनके जन्मदिन पर उनका अभिन्नदन एवं वंदन करते हैं।

जयहिन्द।

दीपावली : पाँच अनुभव

देवराज

(एक)

प्रकाश की गतियाँ
गुज़रती हैं मस्तिष्क से
हवा खोल देती है
सारे दरवाज़े खिड़कियाँ
दीपों की तेजस्वी दुनिया में
उछल-कूद मचाते बच्चे
जोड़ते हैं किलकारियों के मेले
शहर और गाँव की भेदक रेखा को
सबसे बड़ी चुनौती देते हुए
निश्शेष नहीं हुई है अभी
मनुष्य बने रहने की संभावनाएँ॥

(दो)

प्रकाश की भंगिमाएँ
रचती हैं पुकारें
भाषा के पार
अर्थों की सीमाएँ खण्डित करते हुए
घोंसले की नींद में
सपनों की दुनिया रचते बच्चों को
भावुक होकर निहारने के बाद
टहनी पर आ बैठी चिड़िया
सबसे पहले
खोलना शुरु कर देती है
नदी के भीतर आकार लेती
अरुणाभा के अभिनव रहस्य ॥

(तीन)

प्रकाश की लहरें
टकराती हैं रात-दिन
अनंत के तटों से
तोड़ डालती हैं
प्रकाश की लहरें
अनंत के अदृश्य किनारों को
एक और अभिनव अरूप
अनंत रचने के लिए
जहाँ कहीं ठहर जाती हैं
यात्राओं की कल्पनाएँ
वहीं बदलने लगती है
सभ्यता खण्डहरों में॥

(चार)

प्रकाश की ध्वनियाँ
झाँकती हैं नक्षत्रों की आँखों में
पहचानने के लिए
अपनी परछाइयों की
उभरती विलीन होती आकृतियाँ
मन को बाँध लेता है
तितली की उड़ान में
आकाश का निमन्त्रण
जलधर की उँगली थामे
चला आता है इन्द्र-धनुष
ठुमक ठुमक
बालकों की आँखों में
शाम ढले जुगनु
आवाज़ लगाते घूमते
प्रकाश की ध्वनियों को॥

(पाँच)

प्रकाश के सैनिक हैं
सूर्य और चन्द्रमा
असंख्य ब्रह्माण्डों में
ध्वज-वाहक प्रकाश के
असंख्य सूर्य
असंख्य चन्द्रमा
पेड़ भी हैं
प्रकाश के सैनिक
और आदमी भी
प्रकाश की सेना का
सबसे पहला सिपाही
लड़ रहा युद्ध
अँधेरे के विरुद्ध
हर समय, हर जगह॥

आलोक पर्व की ज्योतिर्मय देवी

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

'मारकंडेय पुराण' के अनुसार समस्त सृष्टि की मूलभूत आद्याशक्ति महालक्ष्मी है। वह सत्व, रज और तम तीनों गुणों का मूल समन्वय है। वही आद्याशक्ति है। वह समस्त विश्व में व्याप्त होकर विराजमान है। वह लक्ष्य और अलक्ष्य, इन दो रूपों में रहती है। लक्ष्यरूप में यह चराचर जगत ही उसका स्वरूप है और अलक्ष्य रूप में यह समस्त सृष्टि का मूल कारण है। उसी से विभिन्न शक्तियों का प्रादुर्भाव होता है। दीपावली को इसी महालक्ष्मी का पूजन होता है। तामसिक रूप में वह क्षुधा, तृष्णा, निद्रा, कालरात्रि, महामारी के रूप में अभिव्यक्त होती है; राजसिक रूप में वह जगत का भरण-पोषण करने वाली "श्री" के रूप में उन लोगों के घर में आती है, जिन्होंने पूर्व-जन्म में शुभ कर्म किए होते हैं; परन्तु यदि इस जन्म में उनकी वृत्ति पाप की ओर जाती है तो वह भयंकर अलक्ष्मी बन जाती है। सात्विक रूप में वह महाविद्या, महावाणी, भारती, वाक्, सरस्वती के रूप में अभिव्यक्त होती है। मूल आद्याशक्ति ही महालक्ष्मी है।

शास्त्रों में ऐसे वचन भी मिल जाते हैं, जिनमें महालक्ष्मी या महासरस्वती को ही आद्याशक्ति कहा गया है। जो लोग हिन्दू शास्त्रों की पद्धति से परिचित नहीं होते हैं, वे साधारणतः इस प्रकार की बातों को देखकर कह उठते हैं कि यह बहुदेववाद है। यूरोपिय पण्डितों ने इसके लिये 'पालिथीज्म' शब्द का प्रयोग किया है। पालिथीज्म या बहुदेववाद से एक ऐसे धर्म का बोध होता है, जिसमें अनेक छोटे-बड़े देवताओं की मण्डली में विश्वास किया जाता है। इन देवताओं की मर्यादा और अधिकार निश्चित होते हैं। जो लोग हिन्दू शब्दों की थोड़ी भी गहराई में जाना आवश्यक समझते हैं, वे इस बात को कभी नहीं स्वीकार कर सकते। मैक्समूलर ने बहुत पहले बताया था कि वेदों में पाया जाने वाला 'बहुदेववाद' वस्तुतः बहुदेववाद है ही नहीं, क्योंकि न तो वह ग्रीक-रोमन बहुदेववाद के समान है, जिसमें बहुत-से देव-देवी एक महादेवता के अधीन होते हैं और न अफ्रीका आदि देशों की आदिम जातियों में पाए जाने वाले बहुदेववाद के समान हैं, जिनमें छोटे-मोटे अनेक देवता स्वतंत्र होते हैं. मैक्समूलर ने इस विश्वास के लिए एक शब्द सुझाया था - 'हेनोथीज़्म', जिसे हिन्दी में 'एकैकदेववाद' शब्द से कुछ-कुछ स्पष्ट किया जा सकता है। इस प्रकार के धार्मिक विश्वास में अनेक देवताओं की उपासना होती अवश्य है, पर जिस देवता की उपासना चलती रहती है, उसे ही सारे देवताओं से श्रेष्ठ और सबका हेतुभूत माना जाता है। जैसे, जब इन्द्र की प्रार्थना का प्रसंग होगा, तो कहा जाएगा कि इन्द्र ही आदिदेव है; वरुण, यम, सूर्य, चन्द्र, अग्नि सबका वह स्वामी है और सबका मूलभूत है। पर जब अग्नि की उपासना का प्रसंग होगा, तो कहा जायेगा कि अग्नि ही मुख्य देवता है और इन्द्र, वरुण आदि का स्वामी है और सबका मूलभूत देवता है, इत्यादि।

परन्तु थोड़ी और गहराई में जाकर देखा जाये तो इसका स्पष्ट रूप अद्वैतवाद है। एक ही देवता है, जो विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त हो रहा है। उपासना के समय उसके जिस विशिष्ट रूप का ध्यान किया

जाता है, वही समस्त अन्य रूपों में मुख्य और आदिभूत माना जाता है। इसका रहस्य यह है कि साधक सदा मूल अद्वैत सत्ता के प्रति सजग रहता है। अपनी रुचि और संस्कारों और कभी-कभी प्रयोजन के अनुसार वह उपास्य के विशिष्ट रूप की उपासना अवश्य करता है, परन्तु शास्त्र उसे कभी भूलने नहीं देना चाहता कि रूप कोई हो, है वह मूल अद्वैत सत्ता की ही अभिव्यक्ति। इस प्रकार हिन्दू शास्त्रों की इस पद्धति का रहस्य यही है कि उपास्य वस्तुतः मूल अद्वैत सत्ता का ही रूप है। इसी बात को और भी स्पष्ट करके वैदिक ऋषि ने कहा था कि 'जो देवता अग्नि में है, जल में है, वायु में है, औषधियों में है, वनस्पतियों में है, उसी महादेव को मैं प्रणाम करता हूँ।'

आज से कोई दो हजार वर्ष पहले से इस देश के धार्मिक साहित्य में और शिल्प और कला में यह विश्वास मुखर हो उठा है कि उपास्य वस्तुतः देवता की शक्ति होती है। यह नहीं है कि यह विचार नया है, पहले था ही नहीं, पर उपलब्ध धार्मिक साहित्य और शिल्प और कला सामग्री में यह बात इस समय से अधिक व्यापक रूप में और अत्याधिक मुखर भाव से प्रकट हुई दिखती है। इस विश्वास का सबसे बड़ा आवश्यक अंग यह है कि शक्ति और शक्तिमान् में कोई तात्विक भेद नहीं है, दोनों एक हैं। चन्द्रमा और चन्द्रिका की भाँति वे अलग अलग प्रतीत होकर भी एक हैं -'अन्तरं नैव जानीमश्चन्द्रचन्द्रिकयोरिव।-' परन्तु उपास्य शक्ति ही है। जो लोग इस विश्वास को अपनी तर्कसम्मत सीमा तक खींचकर ले जाते हैं, वे शाक्त कहलाते हैं। जो शक्ति और शक्तिमान् के एकत्व पर अधिक जोर देते हैं, वे शाक्त नहीं कहलाते। मगर कहलाते हों या न कहलाते हों, शक्ति की उपासना पर विश्वास दोनों का है। जिन लोगों ने संसार की भरण-पोषण करने वाली वैष्णवी शक्ति को मुख्य रूप से उपास्य माना है, उन्होंने उस आदिभूता शक्ति का नाम 'महालक्ष्मी' स्वीकार किया है। दीपावली के पुण्य-पर्व पर इसी आद्याशक्ति की पूजा होती है। देश के पूर्वी हिस्सों में इस दिन महाकाली की पूजा होती है। दोनों बातों में कोई विरोध नहीं है। केवल रुचि और संस्कार के अनुसार आद्याशक्ति केविशिष्ट रूपों पर बल दिया जाता है। पूजा आद्याशक्ति की ही होती है। मुझे यह ठीक-ठीक नहीं मालूम कि देश के किसी कोने में इस दिन महासरस्वती की पूजा होती है या नहीं। होती हो तो कुछ अचरज की बात नहीं होगी। दीपावली का पर्व आद्याशक्ति के विभिन्न रूपों के स्मरण का दिन है। यह सारा दृश्यमान जगत - ज्ञान, इच्छा और क्रिया के रूप में त्रिपुटीकृत है। ब्रह्म की मूल शक्ति में इन तीनों का सूक्ष्म रूप में अवस्थान होगा। त्रिपुटीकृत जगत की मूल कारणभूता इस शक्ति को 'त्रिपुरा' भी कहा जाता है। आरम्भ में जिसे महालक्ष्मी कहा गया है उससे यह अभिन्न है। ज्ञान रूप में अभिव्यक्त होने पर यह सत्वगुणप्रधान सरस्वती के रूप में, इच्छा-रूप में रजोगुण-प्रधान लक्ष्मी के रूप में और क्रियारूप में तमोगुण-प्रधान काली के रूप में उपास्य होती है. लक्ष्मी इच्छा रूप में अभिव्यक्त होती है। जो साधक लक्ष्मी-रूप में आद्याशक्ति की उपासना करते हैं, उनके चित्त में इच्छाशक्ति की प्रधानता होती है, पर बाकी दो तत्व ज्ञान और क्रिया भी उसमें सहायक होते हैं। इसीलिए लक्ष्मी की उपासना 'ज्ञानपूर्वा क्रियापरा' होती है, अर्थात वह ज्ञान द्वारा चलित और क्रिया द्वारा अनुगमित इच्छा-शक्ति की उपासना होती है। 'ज्ञानपूर्वा क्रियापरा' का मतलब है कि यद्यपि इच्छाशक्ति ही मुख्यतः उपास्य है, पर पहले ज्ञान की सहायता और बाद में क्रिया का समर्थन इसमें आवश्यक है। यदि उलटा हो जाये, अर्थात इच्छा-शक्ति की उपासना क्रियापूर्वा और ज्ञानपरा हो जाए,

तो उपासना का रूप बदल जाता है। पहली अवस्था में उपास्या लक्ष्मी समस्त जगत् के उपकार के लिये होती है। उस लक्ष्मी का वाहन गरुण होता है। गरुण शक्ति, वेग और सेवावृत्ति का प्रतीक है। दूसरी अवस्था में उसका वाहन उल्लू होता है। उल्लू स्वार्थ, अन्धकारप्रियता और विच्छिन्नता का प्रतीक है। लक्ष्मी तभी उपास्य होकर भक्त को ठीक-ठीक कृतकृत्य करती है जब उसके चित्त में सबके कल्याण की कामना रहती है। यदि केवल अपना स्वार्थ ही साधक के चित्त में प्रधान हो, तो वह उलूक-वाहिनी शक्ति की ही कृपा पा सकता है। फिर तो वह तमोगुण का शिकार हो जाता है। उसकी उपासना लोककल्याण मार्ग से विच्छिन्न होकर बन्ध्या हो जाती है। दीपावली प्रकाश का पर्व है। इस दिन जिस लक्ष्मी की पूजा होती है, वह गरुड-वाहिनी है - शक्ति, सेवा और गतिशीलता उसके प्रमुख गुण हैं। प्रकाश और अन्धकार का नियत विरोध है। अमावस्या की रात को प्रयत्नपूर्वक लाख-लाख प्रदीपों को जलाकर हम लक्ष्मी के उलूकवाहिनी रूप की नहीं, गरुडवाहिनी रूप की उपासना करते हैं। हम अन्धकार का, समाज में कटकर रहने का, स्वार्थपरता का प्रयत्नपूर्वक प्रात्याख्यान करते हैं और प्रकाश का, सामाजिकता का और सेवावृत्ति का आह्वान करते हैं। हमें भूलना न चाहिए कि यह उपासना ज्ञान द्वारा चलित और क्रिया द्वारा अनुगमित होकर ही सार्थक होती है। सर्वहया दया महालक्ष्मीस्त्रीगुणा परमेश्वरी। लक्ष्यालक्षस्वरूपा या व्याप्त कुत्सनं व्यवस्थिता।।

भारतवर्ष

मैथिलीशरण गुप्त

(राष्ट्रकवि श्रद्धेय मैथिलीशरण गुप्त जी की एक सौ इकतीसवीं जन्मतिथि पर
श्रद्धांजलि के रूप में उनकी कविता उन्हीं को समर्पित - संपादक)

मस्तक ऊँचा हुआ मही का, धन्य हिमालय का उत्कर्ष।
हरि का क्रीड़ा-क्षेत्र हमारा, भूमि-भाग्य-सा भारतवर्ष॥

हरा-भरा यह देश बना कर विधि ने रवि का मुकुट दिया,
पाकर प्रथम प्रकाश जगत ने इसका ही अनुसरण किया।
प्रभु ने स्वयं 'पुण्य-भू' कह कर यहाँ पूर्ण अवतार लिया,
देवों ने रज सिर पर रक्खी, दैत्यों का हिल गया हिया!
देखा श्रेष्ठ इसे शिष्टों ने, दुष्टों ने देखा दुर्द्धर्ष!
हरि का क्रीड़ा-क्षेत्र हमारा, भूमि-भाग्य-सा भारतवर्ष॥

अंकित-सी आदर्श मूर्ति है सरयू के तट में अब भी,
गूँज रही है मोहन मुरली ब्रज-वंशीवट में अब भी।
लिखा बुद्ध-निर्वाण-मन्त्र जयपाणि-केतुपट में अब भी,
महावीर की दया प्रकट है माता के घट में अब भी।
मिली स्वर्ण लंका मिट्टी में, यदि हमको आ गया अमर्ष।
हरि का क्रीड़ा-क्षेत्र हमारा, भूमि-भाग्य-सा भारतवर्ष॥

आर्य, अमृत सन्तान, सत्य का रखते हैं हम पक्ष यहाँ,
दोनों लोक बनाने वाले कहलाते है, दक्ष यहाँ।
शान्ति पूर्ण शुचि तपोवनों में हुए तत्व प्रत्यक्ष यहाँ,
लक्ष बन्धनों में भी अपना रहा मुक्ति ही लक्ष यहाँ।
जीवन और मरण का जग ने देखा यहीं सफल संघर्ष।
हरि का क्रीड़ा-क्षेत्र हमारा, भूमि-भाग्य-सा भारतवर्ष॥

मलय पवन सेवन करके हम नन्दनवन बिसराते हैं,
हव्य भोग के लिए यहाँ पर अमर लोग भी आते हैं!
मरते समय हमें गंगाजल देना, याद दिलाते हैं,
वहाँ मिले न मिले फिर ऐसा अमृत जहाँ हम जाते हैं!
कर्म हेतु इस धर्म भूमि पर लें फिर फिर हम जन्म सहर्ष
हरि का क्रीड़ा-क्षेत्र हमारा, भूमि-भाग्य-सा भारतवर्ष॥

प्रेम-नेम

ओमप्रकाश मिश्र

'वह अब तक क्यों नहीं आई?' इसी एक सवाल ने मन में खदबदाहट पैदा कर रखी है। ऐसा तो पहले कभी नहीं हुआ, जब वह न आई हो। फिर आज ही क्यों..? जाने क्यों मन में अजीब सा खालीपन महसूस हो रहा है। कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा। बेचैनी भी है। ऐसा लग रहा, जैसे कुछ खो गया हो।

अकेले में मुँह छिपाकर रोने की इच्छा हो रही है, परंतु घर में सबसे बड़ा व जिम्मेदार होने के नाते, वह भी नहीं कर पा रहा हूँ। डर है कि रोते हुए कोई देख लेगा तो क्या कहेगा। रो लेता तो शायद मन भी हल्का हो जाता, खैर, जो नहीं कर सकता, उसके लिए अब सोचना भी क्या?

खुद को बहलाने के लिए बिस्तर पर जाकर लेट गया और नींद का बुलाने लगा कि - 'हे निद्रा देवी, मेरी आँखों में आकर मुझे इस छटपटाहट से निजात दिला दो।' मेरे अनुनय पर भी नींद को नहीं आना था और वह नहीं आई। बाहर किसी की पदचाप सुनता या कोई आहट आती तो उठकर उत्सुकता से बाहर झाँकता और जब कोई अप्रत्याशित दिखता तो निराशा के साथ बड़ी कोफ्त होती।

घर में चहल-पहल थी। तरह-तरह के पकवानों की मँहक फैली हुई थी। सभी सदस्य अपने-अपने काम में मस्त थे। किसी के पास फुर्सत ही नहीं, एक-दूसरे की मनोदशा को समझने की। मैं ही बस परेशान, परंतु सबके बीच यूँ खुद को बनाए हुये था कि कोई 'गेस' नहीं कर सका कि मेरे दिलोदिमाग में उस वक्त क्या चल रहा है? आखिर वह क्यों नहीं आई? कहा तो था आने को? क्या हो गया? कहीं उसने अपना इरादा तो नहीं बदल लिया? यह भी तो हो सकता है कि वाहन ही न मिला हो....कोई साथी न मिला हो....यही सब सोचते-सोचते शाम के चार बज चुके थे। अब तो उसके आने की रही-सही उम्मीद भी जाती रही। फिर बिस्तर पर आकर लेट गया। एक साहित्यिक पत्रिका उठाकर पलटने लगा लेकिन उसके किसी भी पन्ने की कोई भी लाइन ठीक से नहीं पढ़ सका। पत्रिका जोर से तकिये के पास फेंक दी और टीवी चला लिया। उसमें विज्ञापन चल रहा था। चैनल बदल दिया, उसमें भी विज्ञापन था। फिर चैनल बदला, एक के बाद एक कई चैनल बदलता चला गया -'अरे यह क्या, जो भी चैनल लगा रहा हूँ, सब में एक साथ विज्ञापन ही आ रहे हैं।' अब क्या था, बेचैनी और बढ़ गई - 'साले सब एक साथ ही...जैसे आपस में अनुबंध कर रखे हों...'गुस्से से टीवी बंद कर दिया और पोर्च पर आकर खड़ा हो गया। सामने की सड़क से निकलने वाले हर किसी को यूँ ही देखने लगा। सभी के चेहरों में चमक भरी खुशी थी - मुझमें छोड़कर। जिसको देखो वही सजा-धजा निकल रहा था। लड़कियाँ भी क्या खूब बनी-ठनी नजर आ रहीं थी। तरह-तरह के फैशन व लिबास, उनकी सुंदरता को चार-चाँद लगा रहे थे। परंतु उन्हें देखकर मेरे मन में एक तरह की वितृष्णा जन्म ले रही थी।

आसमान की ओर देखा तो काले-घने बादल बेखौफ मेरा मुँह चिढ़ाते हुए विचरण कर रहे थे। मुझे याद आया कि पिछले २० दिनों से बारिश नहीं हुई है। काले-कलूटे ये बादल बेवजह ही आसमान के सीने में दाल पीस रहे हैं। जिस मौसम में बारिश होनी चाहिये थी। नदी-नाले, ताल-तलैया उफनाने चाहिये थे, उस मौसम में कहीं कोई गड्ढ़ही क्या कहें, गड्ढे तक नहीं भरे हैं। इमरजेंसी आ जाए तो 'सौंचने' को पानी न मिले। उफ..! काफी उमस थी मौसम में। गर्मी से जी बेहाल हो गया। मैं अंदर की तरफ भागा, पंखे के पास। वह भी राहत न दे सका। मैं और अधिक परेशान हुआ। जाने क्यों, बेवजह ही

परेशान व दुखी था। वह नहीं आई तो नहीं आई। उसकी अपनी जिंदगी है और अपनी व्यस्तताएँ? हर बार तो आती थी, इस बार नहीं आई, तो क्या बिगड़ गया। अगली बार आ जाएगी। नहीं भी आयेगी तो यह उसकी मर्जी, उसकी अपनी जिंदगी, अपना निर्णय और...हम इसी बात को लेकर दिन भर घर में बैठे रहे। कहीं गए भी नहीं। किसी से मिलना-जुलना भी नहीं हुआ। यूँ ही, एक छुट्टी भी चली गई।

वैसे भी अखबार की नौकरी में कहाँ छुट्टियाँ मिलती हैं? आदमी बीमार पड़ जाये या फिर बीमार होने का बहाना कर ले और न जाए, तो ही छुट्टी मिलती है। बहुत कम मौके होते हैं, जब माँगने पर छुट्टी मिलती है। अन्यथा हजार सवाल किये जाएँगे। क्यों चाहिये छुट्टी? कहाँ जाओगो? क्या काम है? कल चले जाना....अरे, उनका बस चले तो चिता में लेटे रिपोर्टर से भी कह दें कि पहले खबर लिख दो फिर मरना-जलना....यह तो होती है अखबार की नौकरी....सोचा था कि वह आयेगी तो उसके साथ कुछ समय बिताऊँगा। साथ भोजन करेंगे। फिर उसके मन की खरीदारी कर उसे उपहार देंगे।

साल का एक ही दिन तो है, जब वह आती है और मैं जी उठता हूँ। मचल उठता हूँ। मुझे अपने जीवित होने का एहसास होता है। जैसे अषाढ़ में पहली बारिश के बाद जमीन में सूखे पड़े निरर्थक बीज भी अंकुरित होकर बाहर निकल आते हैं। हरियरा कर लहराने लगते हैं। मैं भी कुछ इसी तरह से भोर के पंछी की तरह फुदकने लगता हूँ। वह भी तो कमल की तरह खिली-खिली नजर आती है। उस दिन अपने सारे कार्यों से छुट्टी ले लेता हूँ। रिश्तेदारों के अलावा किसी का फोन तक 'रिसीव' नहीं करता। पूरे समय उसके आगमन की तैयारी करता हूँ। महीनों पहले से छोटी-छोटी बचत कर उसके लिए बजट बनाता रहता हूँ। बाजार जाता हूँ। कपड़े व मिठाइयाँ खरीदता हूँ और भी बहुत सी ज़रूरी चीज़ों को बाजार से लाकर इस एक दिन के लिए सहेज के रखता रहता हूँ। उसका आना मेरे लिए किसी उत्सव से कम नहीं होता। फिर भी वह नहीं आई। यही बात मुझे साल रही थी। नहीं आना था, तो न आती, एक फ़ोंन तो कर देती। मैं भी निश्चिंत हो जाता। कहीं घूमने-फिरने ही चला जाता या किसी दोस्त के यहाँ चला जाता। बहुत दिनों से गाँव में मम्मी-पापा के पास नहीं पहुँचा। मामा के यहाँ भी नहीं गया था। पास ही में तो रहते हैं, इसके बाद भी पाँच महीने हो गये, उनसे मिले हुये। आखिरी बार मार्च में गया था। तब मामी ने नाश्ते में मुगौड़ी बनाई थी। फिर दोपहर में इंदरहर की कढ़ी और रात में खीर। चारों मामा के साथ पकवानों का लुत्फ़ उठाया था। रात भर किस्सागोई, गप्प व यहाँ-वहाँ की बातों के साथ 'ताश' खेली थी। 'दहला पकड़ और ट्वेंटी नाइन' की कितनी ही बाजियाँ हुई थीं। बड़ी मामी बार-बार आकर याद दिलातीं, 'रात बहुत हो गई है, अब कल खेल लेना....' और फिर समवेत स्वर में यह कहकर खेल चलता रहता, 'बस, एक राउंड....' तब से मौका ही नहीं लगा, वहाँ जाने को।

खैर, मन भटकता रहा, यहाँ-वहाँ। कभी-कभी मेरे चेहरे पर अंदर के भाव आने को आतुर हो जाते तो मैं उन्हें जज्ब कर जाता, क्योंकि मैं यह कतई जाहिर नहीं करना चाहता था कि उसके लिए मैं इतना फिक्रमंद भी हो सकता हूँ। लाख चाह कर भी मुझे यह बात नहीं भूल रही थी कि उसने बिना कोई सूचना दिए अपना 'प्रोग्राम' कैसे चेंज कर लिया। अब तक तो वह आ जाती थी और हम सब भोजन व आराम करने के बाद बाजार घूमने निकल जाते थे।

कुछ भी हो, अब मैं और उसका इंतजार नहीं कर सकता, मेरे बस में ही नहीं था। कलाई की ओर देखा, घड़ी में पाँच बज रहे थे। दूसरे हाथ की खाली कलाई पकड़ कर जोर से मरोड़ने लगा। अचानक ख्याल आया, अरे! मैं भी अव्वल दर्जे का मूर्ख ही ठहरा। मेरी अक्ल भी घास चरने चली गई

थी। उसने फोन नहीं किया तो क्या हुआ? मोबाइल तो मेरे पास भी है। मैंने ही क्यों नहीं लगाया। मोबाइल पर यह तो पूछ ही सकता था कि कहाँ हो तुम? आ रही हो कि नहीं?

अचानक मोबाइल की रिंगटोन बजने लगी। मुझे लगा कि उसी की कॉल होगी। टेबल पर रखे मोबाइल की ओर झपटा, देखा तो स्क्रीन पर एक अनचाहे व्यक्ति का नाम था। एक मन हुआ कि फोन उठा लूँ, परंतु दूसरे ही पल लगा कि कहीं कोई काम न बता दे और बचा-खुचा दिन भी खराब हो जाए। मैंने फोन नहीं उठाया। रिंगटोन बजती रही। थोड़ी देर में जब रिंगटोन बजना बंद हुई तो मै नंबर लगाने लगा। जैसे ही नंबर दबा के फुरसत हुआ कि फिर से वही अनचाहा काल। बहुत ही गुस्सा आया और गाली देते हुये फोन काट दिया। अब मैं अपना इच्छित नंबर मिलाने लगा लेकिन हर बार 'आउट ऑफ कवरेज' बताता। कभी 'बीप-बीप' की आवाज के बाद 'कट' जाता।

अंतत: हारकर मैने मोबाइल जेब में रखा और घर से बाहर निकल गया। अब तक वह नहीं आई थी। अब उम्मीद भी नहीं थी लेकिन दिल के एक कोने में यह विश्वास अभी भी था कि वह आयेगी जरूर। आखिर उसने भी तो आज के दिन के लिए इंतजार किया होगा। तैयारियाँ की होंगी। आज के कामों को अन्य दिनों के लिए टाला होगा। नहीं आई तो जरूर कोई मजबूरी रही होगी। रात में भी तो आ सकती है? कहीं बीमार तो नहीं पड़ गई? खबर तो देनी ही चाहिए थी? यही सब गुनते-धुनते मैं यूँ ही सड़क नाप रहा था। कोई योजना नहीं थी। कोई मक्सद भी नहीं था। बस, चलता चला जा रहा था, किसी भटके हुए पथिक की तरह। जब कदम रुके तो सामने थिएटर था। मैने टिकट खिड़की में हाथ डाल दिया। तभी मोबाइल की रिंगटोन बजी। घर से फोन था। मैं फोन रिसीव कर पाता तब तक मेरे हाथ में कुछ छुट्टे पैसों के साथ एक टिकट आ चुका था। टिकट को मुट्ठी में दबाकर खिड़की से हाथ बाहर खींचते हुये दूसरे हाथ से फोन रिसीव किया, 'हैल्लो....!

उधर से जवाब आया, 'कहाँ हैं, जल्दी आइए....वो आ गई हैं...।' वह घर पहुँच चुकी थी और मैं फिल्म देखने के लिए टिकिट ले चुका था। उहापोह की स्थिति में एक कदम थियेटर के हाल की तरफ जाता तो दूसरा कदम घर की ओर बढ़ जाता। आखिर इस स्थिति से खुद को उबारते हुये मैं घर आ गया। वह सचमुच आ चुकी थी। मुझे देखते ही, उसने मेरा हाथ पकड़कर खींच लिया और गले से लिपट गई, 'ओह मेरे कृष्ण! कहाँ चले गये थे तुम, कब से इंतजार कर रही हूँ।'

'अच्छा, उल्टा चोर कोतवाल को डाँटे....लेट आई और इल्जाम भी लगा दिया....'

'खैर, तुम्हारे उलाहने भी तो मुझे प्रिय और सुखद ही लगते हैं। उन्हें मैं सीने से लगा कर रखता हूँ....'

'अच्छा, झुट्ठे कहीं के'

अभी हमारे गिले-शिकवे चल ही रहे थे कि बीच में मेरी अर्धांगिनी 'रुक्मी' आ गईं। उन्होंने बीच में ही बेढ़ही मारते हुए हमें टोका और कहा, 'अब राधा-कृष्ण मिल चुके हों तो भोजन लगाएँ। मुझे भूख लगी है और फिर बाजार भी तो जाना है।'

मैं न कृष्ण हूँ और न वह राधा। परंतु हमारे बीच स्कूल समय से ही कुछ ऐसा 'प्रेम-नेम' है कि मेरी श्रीमती जी 'राधा-कृष्ण' कह कर ही हमें पुकारती हैं। हम तीनों के बीच कोई भेद नहीं है। कोई पर्दा नहीं है। कोई एतराज व शिकायत भी नहीं है। हम मन से एकाकार हैं। एक-दूसरे में समाए हुए हैं। हाँ, हमारे रास्ते और मंजिलें ज़रूर अलग-थलग हो गए हैं। वह मुझसे काफी दूर रीवा शहर में बच्चों की नामी गिरामी डॉक्टर है और मैं एक दूसरे शहर के अंदर अखबारों में अपना और अपने बच्चों का भविष्य तलाश रहा हूँ। वह जब भी मुझसे मिलती है, तो बच्चों की तरह ही मुझे ट्रीट करती है। पहले खूब

मुलाकातें-बातें होती थीं, लेकिन अब साल में सिर्फ एक बार हम मिल पाते हैं, हम दोनों के जन्म दिन पर। हम दोनों एक ही दिन पैदा हुए थे, जैसे ईश्वर ने योजना बनाकर हमें एक-दूसरे के लिए ज़मीन में उतारा हो। वह दुनिया के चाहे जिस कोने में रही हो, हमारे जन्म दिन पर मिलने ज़रूर आई है। अब तक तो ऐसा ही होता आया है। आगे कब तक यह निभेगा, भविष्य के गर्भ में है। बहारहाल उसके आने से मेरे पाँव जमी पर नहीं पड़ रहे हैं। मैं प्रफुल्लित व आनंदित हूँ। उसका सामीप्य पाकर उत्साह के अतिरेक में हमेशा की तरह बिना किसी लाग लपेट के, बिना किसी धारा के बहा जा रहा हूँ। किशोरावस्था से ही उसके बदन की जो खुशबू मेरे नाक व दिलो-दिमाग में बसी थी, वह उसी ताजगी के साथ आज भी मुझे रोमांचित कर रही है। पहले तो लगा कि हम दोनों की राहें व मंजिल एक ही हैं, लेकिन जल्दी ही पता चल गया कि यह हमारा एक भ्रम ही था। मैं कुछ-कुछ परंपराओं की बेडियों से जकड़ा हुआ कुड़मुड़ाता रहा और वह किसी परिंदे की मानिंद खुले गगन को नापने उड़ चली। हमारे रिश्तों के बारे में जब मेरे मम्मी-पापा को पता चला तो उन्होंने एक दिन उसके डॉक्टर पिता से मेरे लिए उसका हाथ भी माँग लिया। वे सहर्ष तैयार भी हो गए लेकिन उसने कहा कि 'मुझे अभी अपना कैरियर बनाना है, पढ़ाई पूरी करनी है....'

मैंने उसके इस निर्णय की सराहना भी की और कहा कि हम दोनों कैरियर बनाने के बाद ही कोई निर्णय लेंगे। लेकिन यह विडंबना ही थी कि न मेरा कैरियर बना और न ही वह पूरी तरह से मेरी हो सकी। वह तो अपने प्रस्ताव पर अडिग रही परंतु मैं ही ढुलमुल हो गया। या यूँ कहें कि मैं परंपराओं की जकडऩ से नहीं निकल सका। माता-पिता की इच्छा व उनके निर्णय को ही सर्वोपरि माना। उसने तो अभी तक किसी को अपना दूसरा साथी नहीं बनाया। कहता भी हूँ तो हँस कर टाल जाती है। कहती है, अभी मुझे शोध करना है। ये करना है, वो करना है, न जाने क्या-क्या करना है उसे, इसी में वह खुद को व्यस्त रखती है। अब किसी की सुनती भी नहीं, मनमानी हो गई है। जिद्दी हो गई है। जाने क्या उसका सपना है? कभी खुलकर कहती भी नहीं।

एक दिन हमीं हठ करने लगे कि 'नहीं, बताओ तुम, आखिर कब शादी करोगी?'

वह कुछ देर चुप रही और फिर बोली, 'जब मेरा रिसर्च पूरा हो जायेगा।'

मैने फिर पूछा, 'आखिर कब पूरा होगा तुम्हारा रिसर्च?'

तो उसने कहा, 'जिस दिन मैं यह साबित कर दूँगी कि आदमी बिना दिल व गुर्दे के भी जी सकता है....यही मेरे रिसर्च की थीम है....'

उसका जवाब सुनकर मैं निरुत्तर हो गया था। मुझे लगा, जैसे उसने यह बात मेरे लिए ही कही हो। एक पल के लिए यह भी लगा कि कह दूँ कि 'वह व्यक्ति कोई और नहीं, मैं ही हूँ, जो बिना दिल व गुर्दे के जी रहा है। तुम्हारा रिसर्च पूरा हुआ और अब तुम अपना जीवन साथी ढूढ लो।' लेकिन नहीं कह सका यह सब। रूँध से गये मेरे होठ। बेजुबान हो गया मैं....और सब कुछ एक बार फिर से नियति पर छोड़ दिया।

हमने तो परिणय सूत्र में बँधने से पहले रुक्मि से भी पूरी बात बता दी थी। लेकिन रुक्मि ने कोई एतराज नहीं किया। उसने अपनी पूरी स्वीकृति दे दी और कहा, 'राधा संग मैं रुक्मि की तरह आपके दिल में रहूँगी।' तब से मैं अपनी श्रीमतीजी को रुक्मि ही कहकर पुकारता हूँ और उन्होंने भी अपना पुराना नाम बदलकर 'रुक्मि' ही रख लिया है। राधा, रुक्मि और बच्चे हम सबने साथ-साथ केक काटा, भोजन किया और फिर बाजार के लिए निकल पड़े। मेरी जेब में अब भी थियेटर का टिकट कुड़मुड़ा रहा है।

द्युति की कली

गजानन माधव मुक्तिबोध

(आधुनिक हिन्दी साहित्य के महान् मानवतावादी रचनाकार गजानन माधव मुक्तिबोध की जन्मशती पर उन्हीं की रचना उनको श्रद्धांजलि रूप में सादर, सस्नेह समर्पित - संपादक)

शाम की हल्की गुलाबी शांति में
निष्पाप नीरा ज्योति सी
द्युति की कली!
इस मोतिया आकाश की द्युति-तारिका।

गृह द्वार आँगन में बिछी
जो मौन कमरे में रमी
वह मोतिया आकाश की कर्पूर कोमल कांति है,
हिय में बसी -
त्यों यह तुम्हारे रूप की
कोमल सफ़ेद गुलाब सी द्युति-शांति है।

गृह-द्वार आँगन में रमी -
व्यक्तित्व की आभा तुम्हारी विश्व-मानव-संगमी
यों खिल चली
हिय-सोच के सुप्रसन्न कोमल रंग सी -
ज्यों साफ़-पोंछे अमल गृह-कंदील के
मृदु काँच में किरनें उगीं।

क्यों ?

डॉ. मुक्ता

रात के अँधेरे में वह अपनी पत्नी की गोद से बच्ची को छीन रहा था और उसकी पत्नी सीने से लगाए उसे बचाने के निमित्त संघर्ष कर रही थी. वह उसे अनेक यातनाएँ दे चुका था. उसके शरीर का पोर-पोर दु:ख रहा था. वह दर्द से कराह रही थी.

इतनी देर में उसकी क्रूर सास ने दहाड़ लगाई तथा अपनी कर्कश ध्वनि में उसे अपनी बेटी को साथ लेकर घर से निकल जाने का फ़ैसला सुना डाला. वह मासूम गुहार लगाती रही कि इस समय वह बच्ची को अपने साथ कहाँ लेकर जाए?

उन्होंने उसे धक्के मारकर बाहर निकाल दिया. उसके नेत्रों से बरसते आँसू माँ-बेटे को द्रवित नहीं कर पाए. थोड़ी दूर जाने पर वह सड़क के किनारे बैठ गई. थोड़ी देर में एक चमचमाती कार वहाँ उन्हें रौंदते हुए निकल गई.

कार का मालिक उन्हें कोस रहा था, "सड़क को अपने बाप की जायदाद समझा है जो यहाँ डेरा डाले बैठी थी. पता नहीं क्या मंशा रही होगी उसकी....चलो! मैंने उसे मुक्ति प्रदान कर दी."

इंसान स्वयं को बेगुनाह साबित करने के लिए दूसरों पर कितनी आसानी से दोषारोपण कर देता है.

ज़माने का चलन ही यही है कि बेटी के जन्म के लिए दोषी ठहराया जाता है औरत को जबकि इसके लिए उत्तरदायी होता है पुरुष. वह सदैव अपनी पत्नी पर हावी रहता है और वह मासूम उसके ज़ुल्मों के सामने निरुत्तर हो जाती है. इसके लिए उसका दोषी उसका पति है या माँ, जिसने उसे बचपन से संस्कारित नहीं किया या हमारी सामाजिक व्यवस्था....जो बेटे-बेटी में भेद दर्शाती है या वे सिरफिरे लोग जो अपनी रफ़्तार पर अंकुश नहीं लगाते और गरीबों को कीड़े-मकौड़ों की भाँति रौंदते हुए आगे बढ़ जाते हैं?

यह सब क्या है?

डॉ. रमेश सक्सैना 'गश देहलवी'

सोचता हूँ -
जीवन क्या है?

सागर की गहराई में डूबी
पहाड़ की ऊँचाई क्या है?
चंद्र-संग विचरते तारों की
स्वयं की पहचान क्या है?

पुष्पों से घिरे हुए
काँटों का रूप क्या है?
कूप में डूबने को
पनघट का चक्र क्या है?

नागिन होने पर भी
सर्प से लगाव क्या है?
पीड़ा, कसक, ग़म
यह याद भी क्या है?

चलना है या रुक जाना
ये सब उलझन क्या है?

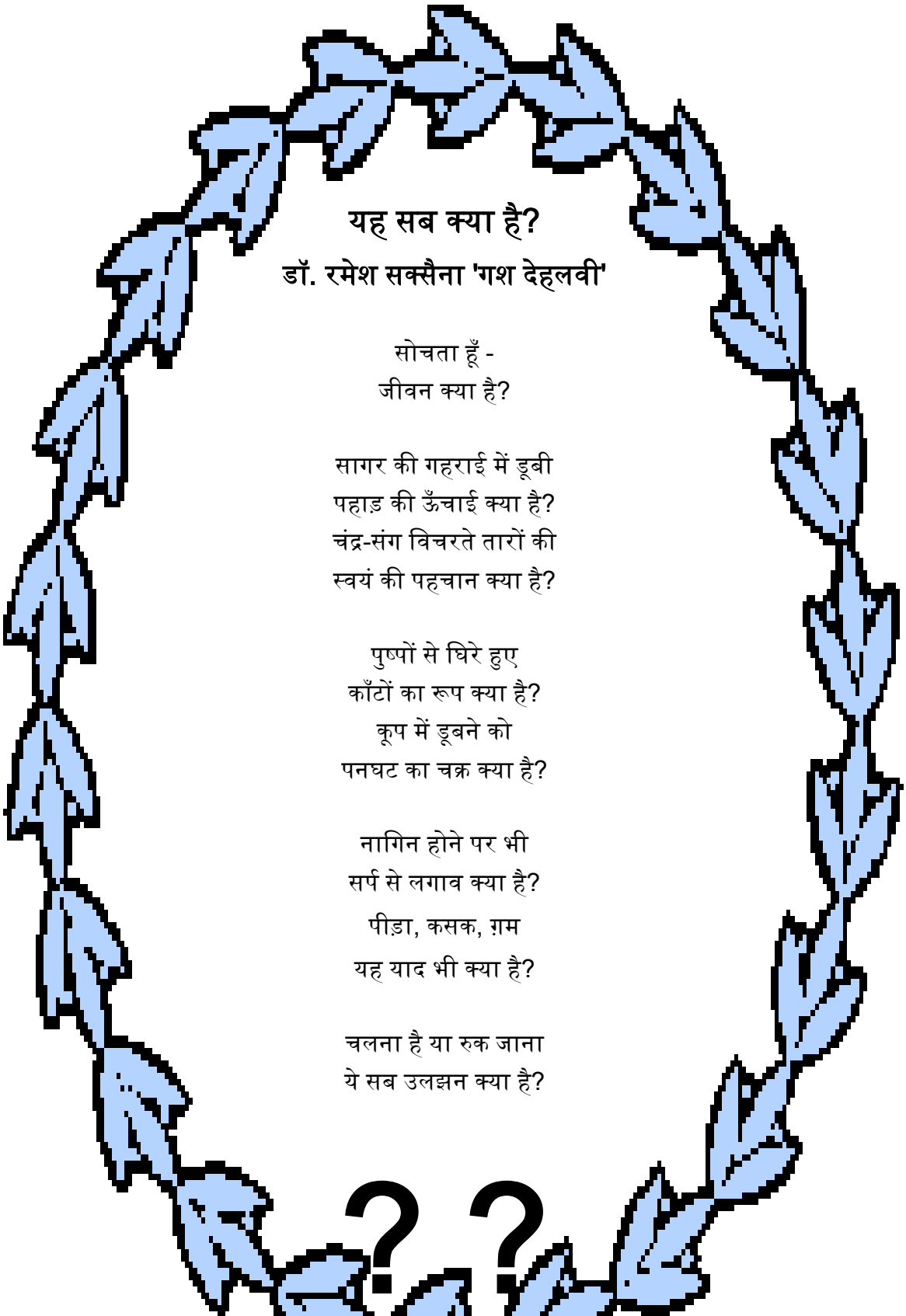

लाला लाजपत राय को शत-शत नमन

(पुण्यतिथि पर विशेष - प्रवासी दुनिया से साभार - संपादक)

आजादी की लड़ाई का इतिहास क्रांतिकारियों के विविध साहसिक कारनामों से भरा पड़ा है और ऐसे ही एक वीर सेनानी थे लाला लाजपतराय जिन्होंने देश के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया।

लाला लाजपतराय आजादी के मतवाले ही नहीं, बल्कि एक महान समाज सुधारक और महान समाजसेवी भी थे। यही कारण था कि उनके लिए जितना सम्मान गाँधीवादियों के दिल में था उतना ही सम्मान उनके लिए भगतसिंह और चंद्रशेखर आजाद जैसे क्रांतिकारियों के दिल में भी था।

लालाजी का जन्म २८ जनवरी १८६५ को पंजाब के फीरोजपुर जिले के धूदिकी गाँव में हुआ था। स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद उन्होंने कानून की उपाधि प्राप्त करने के लिए १८८० में लाहौर के राजकीय कॉलेज में प्रवेश ले लिया। इस दौरान वे आर्य समाज के आंदोलन में शामिल हो गए।

लालाजी ने कानूनी शिक्षा पूरी करने के बाद जगरांव में वकालत शुरू कर दी। इसके बाद वे रोहतक और फिर हिसार में वकालत करने लगे। आर्य समाज के सक्रिय कार्यकर्ता होने के नाते उन्होंने दयानंद कॉलेज के लिए कोष इकट्ठा करने का काम भी किया। वे हिसार नगर निगम के सदस्य चुने गए और बाद में सचिव भी चुन लिए गए।

स्वामी दयानंद सरस्वती के निधन के बाद लालाजी ने अपने सहयोगियों के साथ मिलकर एंग्लो वैदिक कॉलेज के विकास के प्रयास करने शुरू कर दिए।

हिसार में लालाजी ने काँग्रेस की बैठकों में भी भाग लेना शुरू कर दिया और धीरे-धीरे कांग्रेस के सक्रिय कार्यकर्ता बन गए। १८९२ में वे लाहौर चले गए। १८९७ और १८९९ में जब देश के कई हिस्सों में अकाल पड़ा तो लालाजी राहत कार्यों में सबसे अग्रिम मोर्चे पर दिखाई दिए।

जब अकाल पीड़ित लोग अपने घरों को छोड़कर लाहौर पहुँचे तो उनमें से बहुत से लोगों को लालाजी ने अपने घर में ठहराया। उन्होंने बच्चों के कल्याण के लिए भी कई काम किए। जब कांगड़ा में भूकंप ने जबरदस्त तबाही मचाई तो उस समय भी लालाजी राहत और बचाव कार्यों में सबसे आगे रहे।

अँग्रेजों ने जब १९०५ में बंगाल का विभाजन कर दिया तो लालाजी ने सुरेंद्रनाथ बनर्जी और विपिनचंद्र पाल जैसे आंदोलनकारियों से हाथ मिला लिया और अँग्रेजों के इस फैसले की जमकर मुखालफत की।

उन्होंने देशभर में स्वदेशी वस्तुएँ अपनाने के लिए अभियान चलाया। तीन मई १९०७ को ब्रितानिया हुकूमत ने उन्हें रावलपिंडी में गिरफ्तार कर लिया। रिहा होने के बाद भी लालाजी आज़ादी के लिए लगातार संघर्ष करते रहे।

लालाजी ने अमेरिका पहुँचकर वहाँ के न्यूयॉर्क शहर में अक्टूबर १९१७ में इंडियन होम रूल लीग ऑफ अमेरिका नाम से एक संगठन की स्थापना की। लालाजी परदेश में रहकर भी अपने देश और देशवासियों के उत्थान के लिए काम करते रहे। २० फरवरी १९२० को जब भारत लौटे तो उस समय तक वे देशवासियों के लिए एक नायक बन चुके थे।

लालाजी ने १९२० में कलकत्ता में काँग्रेस के एक विशेष सत्र में भाग लिया। वे गाँधीजी द्वारा अँग्रेजों के खिलाफ शुरू किए गए असहयोग आंदोलन में कूद पड़े जो सैद्धांतिक तौर पर रौलेट एक्ट के विरोध में चलाया जा रहा था।

लाला लाजपतराय के नेतृत्व में यह आंदोलन पंजाब में जंगल में आग की तरह फैल गया और जल्द ही वे पंजाब का शेर या पंजाब केसरी जैसे नामों से पुकारे जाने लगे। लालाजी ने अपना सर्वोच्च बलिदान साइमन कमीशन के समय दिया।

तीन फरवरी १९२८ को कमीशन भारत पहुँचा जिसके विरोध में पूरे देश में आग भड़क उठी। लाहौर में ३० अक्टूबर १९२८ को एक बड़ी घटना घटी जब लाला लाजपतराय के नेतृत्व में साइमन का विरोध कर रहे युवाओं को बेरहमी से पीटा गया। पुलिस ने लाला लाजपतराय की छाती पर निर्ममता से लाठियाँ बरसाईं। वे बुरी तरह घायल हो गए और अंततः इस कारण १७ नवम्बर १९२८ को उनकी मौत हो गई।

लालाजी की मौत से सारा देश उत्तेजित हो उठा और चंद्रशेखर आजाद, भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव व अन्य क्रांतिकारियों ने लालाजी की मौत का बदला लेने की ठानी। इन जाँबाज देशभक्तों ने लालाजी की मौत के ठीक एक महीने बाद अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर ली और १७ दिसंबर १९२८ को ब्रिटिश पुलिस के अफसर सांडर्स को गोली से उड़ा दिया।

लालाजी की मौत के बदले सांडर्स की हत्या के मामले में ही राजगुरु, सुखदेव और भगतसिंह को फाँसी की सजा सुनाई गई।

हिन्दी भाषा : एक राष्ट्रीय पहचान

आनंद दास

हिन्दी एक उदार भाषा है। हिन्दी को राष्ट्रीय एकता का प्रतीक कहा जाना तार्किक एवं व्यावहारिक दोनों ही दृष्टियों से संगत प्रतीत होता है। भाषा के रूप में हिन्दी का विकास और विस्तार भारत राष्ट्र के निर्माण की प्रक्रिया के उपजात के रूप में ही हुआ। देश के स्वाधीनता संग्राम में हिन्दी भाषा ने उत्तर से दक्षिण तथा पूरब से पश्चिम तक संवाद के सबसे सबल सूत्र के रूप में स्वयं को स्थापित किया। इस क्रम में हिन्दी भाषा ने अनेक दबावों को झेला, विरोधों को सहा, प्रतिक्रियाओं को आत्मसात किया और देश की पहचान हिन्दी के रूप में अपने को स्थापित किया। भारत को स्वतंत्र हुए अनेक वर्ष हो गए फिर भी हिन्दी भाषा राष्ट्रीय पहचान नहीं है। हिंदी की इस प्राथमिकता की गुजरात में स्वामी दयानंद सरस्वती ने, असम में लोकप्रिय गोपीनाथ बदरले ने, बंगाल में केशवचंद्र सेन ने, तमिलनाडु (तत्कालीन मद्रास) में सुब्रह्ण्यम भारती ने सराहना की तथा अपने अभियान में हिंदी को साथ लिया। महात्मा गाँधी तथा उनके अनुयायी विनोवा भावे ने हिंदी को राष्ट्रीय आंदोलन के रचनात्मक कार्यक्रम में स्थान इसीलिए दिया कि हिंदी के प्रति भारतीय जन समुदाय में अपनापन का भाव भरा था । महात्मा गाँधी, सुभाष चंद्र बोस, केशवचन्द्र सेन ऐसे अनगिनत नाम मिल जाएँगे, जिन्होंने क्षेत्रीय स्तर से ऊपर उठकर राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोने के लिए हिन्दी भाषा को चुना। महात्मा गाँधी ने हिन्दी भाषा को राष्ट्रीय चरित्र से जोड़कर सही अर्थों में राष्ट्रभाषा का एक आंदोलन खड़ा कर दिया। उनका मानना था कि अँग्रेज और उपनिवेशवाद से भी ज्यादा खतरनाक अँग्रेजी है। इस लिहाज से हमें सबसे पहले अँग्रेजी को अपने देश से विदा कर देना चाहिए और अँग्रेजी की जगह अपनी भाषा हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाना चाहिए। सही मायने में गाँधी ने ही हिन्दी की संकल्पना राष्ट्रभाषा के रूप में की। डॉ. शंकर दयाल सिंह के शब्दों में "राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी को प्रतिष्ठित करने का श्रेय पूर्णतया महात्मा गाँधी को है जिन्होंने आजादी अथवा राष्ट्रीय संघर्ष के साथ इसे जोड़ा। यों उनके पहले स्वामी दयानंद सरस्वती से लेकर राजा राममोहन राय, केशवचन्द्र सेन और मदन मोहन मालवीय जी ने इसे सर्वव्यापक बनाने की दिशा में काफी प्रयास किया।" हिंदी ने भारतीय स्वाधीनता संग्राम के मूल्यों को आत्मसात किया तथा देश के विभिन्न भागों में हुए आंदोलनों, अभियानों, क्रांतियों के संदेश को जन-जन तक पहुँचाया। इस क्रम में हिन्दी कवियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

हिन्दी का आदर्श भारतीय राष्ट्रवाद रहा है। अमीर खुसरो के काल से लेकर डॉ. रामविलास शर्मा तक के इस समकालीन भारत में हिन्दी ने भारतीय राष्ट्रवाद को ही अपने समक्ष रखा है। स्वाधीनता आंदोलन के सेनानियों ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में अपनाया। भाषा के साथ धर्म और उग्र जातीयता का ऐसा गहरा संबंध बन चुका है कि भाषा किसी की मजहबी पहचान, तो किसी के लिए राष्ट्र से अधिक अपनी जातीय पहचान का मुद्दा है। अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में ही नहीं, हिन्दी भाषी क्षेत्र में भी हिन्दी और उर्दू को लेकर इतने विवाद हैं कि हिन्दी को हिन्दू धर्म का पर्याय बना दिया गया है। डॉ. रामविलास शर्मा लिखते हैं – "भाषा-समस्या का घनिष्ठ संबंध राष्ट्रीय एकता से है, यह बात किसी से छिपी नहीं है। जिस राष्ट्र में जितनी ही आंतरिक दृढ़ता होगी उतनी ही वह हर तरह के तनाव और बोझ सह लेने की स्थिति में होगा।. . .भाषा-समस्या का सही समाधान राष्ट्रीय एकता को दृढ़

करके उसे अजेय बना सकता है, भाषा-समस्या का गलत समाधान लोगों में असंतोष पैदा करके राष्ट्रीय एकता को कमजोर कर सकता है।"

हिन्दी साहित्य का स्वर राष्ट्रवादी रहा है। हिन्दी के आरंभिक साहित्य से लेकर इसके वर्तमान साहित्य तक की प्रवृत्तियों का अध्ययन करने से यह बात स्पष्ट होती है कि इसमें देश के विभिन्न क्षेत्रों, प्रदेशों और भू-भागों की सामाजिक चेतना को लगातार प्रतिष्ठा मिली है। हिंदी का अपना कहा जानेवाला कोई प्रदेश नहीं है। साहित्य में पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक तथा साहित्यिक पहचान मिलती है तो सुदूर केरल और कन्याकुमारी के रमणीय समुद्री तटों की अभिराम शोभा का वर्णन मिलता है। 15 अगस्त 1947 ई. को जिस स्वाधीन राष्ट्र भारत का उदय हुआ वह कई मामलों में अपने अतीत से एकदम अलग है। यह राष्ट्र, जैसा कि इसके संविधान ने घोषित किया एक पंथनिरपेक्ष, समाजवादी, प्रजातांत्रिक गणराज्य है। समाजशास्त्रियों के अनुसार भारत बहुलता प्रधान राष्ट्र है। भाषा, उपासना, सांस्कृतिक पहचान, रीति-नीति किसी भी आधार पर भारत की परिभाषा सरलता से नहीं की जा सकती। यानी न तो भाषा के आधार पर और न ही उपासना के बल पर भारत को कोई एक परिधान भारत की पहचान बन सकता है और न ही कोई एक विश्वास ही पूरी तरह इसकी अभिव्यक्ति कर सकता है। भारतीय राष्ट्र के भूगोल ने इसे एक उप-महाद्वीप का दर्जा दे दिया है और भारतीय इतिहास के चित्रपट पर इस राष्ट्र की पहचान एक मानवता के महासागर की तरह है। गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर ने इसी संदर्भ में लिखा है- 'एक भारतेर महामानवेर सागर तीरे।' ऐसे में भारत की पहचान के लिए किसी एक लक्षण को रेखांकित करना कठिन हो गया। परंतु हिन्दी भाषा की विशेषताओं पर यदि गौर करें तो बहुत हद तक लगता है कि इसे भारत की राष्ट्रीय पहचान के लक्षण के रूप में ग्रहण किया जा सकता है।

हिंदी भाषा के साहित्य में, अनूदित रूप में, समस्त भारत की विभिन्न भाषाओं में निवद्ध उत्कृष्ट साहित्य, अनुकरणीय जीवन चरित तथा गहनीय घटनाक्रमों का विस्तृत उल्लेख मिलता है। पंजाबी की लेखिका अमृता प्रीतम अथवा उर्दू के लेखक रघुपति सहाय फिराक हिंदी के साहित्य में रचे-बसे हैं। उर्दू से अपना साहित्यिक सफर आरंभ करनेवाले प्रेमचंद को अंतत: हिंदी ने उपन्यास सम्राट के रूप में अपना बना लिया। बेल्जियम से धर्म प्रचार के निमित्त भारत आए फादर कामिल बुल्के ने शीघ्र ही यह समझ लिया कि भारत की आत्मा का सर्वथा अविकलक प्रतिबिंब हिंदी में ही मिलता है। डॉ. रामविलास शर्मा का कथन है - "भारत एक राष्ट्र है। हमारी राष्ट्रीयता केवल अँग्रेजों का विरोध करने के लिए नकारात्मक रूप से किन्हीं विशेष परिस्थितियों में उत्पन्न नहीं हो गई। उसकी जड़ें हमारी ऐतिहासिक और आर्थिक परंपराओं में बहुत गहरी पैठी हैं।" डॉ. शर्मा का मानना है कि हमारी भाषा-समस्या दरअसल हमारी जातीय समस्या है। भारत में बहुभाषिक जातियाँ रहती हैं। भारत एक बहुजातीय राष्ट्र है। इन जातियों के बीच संपर्क भाषा की समस्या अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। एक तरह से यह हमारी राष्ट्रीय एकता का भी प्रश्न है। मातृभाषा और अपनी भाषा का प्रश्न इस कारण ही और भी गैरवाजिब हो गया है। भारत जैसे बहुजातीय समाज में जहाँ भाषा की एक अहम् भूमिका है, और जब हम भाषा, संपर्क भाषा, राजभाषा और राष्ट्रभाषा के प्रश्नों से लगातार जूझ रहे हैं, हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम भाषा को अपने राष्ट्रीय हित से जोड़कर देखें और भाषा को राष्ट्रीय पहचान का सबब बनाएँ।

निलम्बन

डॉ. कविता त्यागी

राजकीय अस्पताल के चिकित्सक-कक्ष में सात-आठ चिकित्सक बैठकर गप्पशप कर रहे थे। बातों ही बातों में उनके बीच बहस छिड़ गई कि सरकारी अस्पतालों में सेवारत चिकित्सकों की प्राइवेट प्रैक्टिस पर सरकार को प्रतिबंध नहीं लगाना चाहिए। डॉक्टर आलोक का मत था, सरकारी अस्पताल में सेवारत चिकित्सक अपनी प्राइवेट प्रैक्टिस आरम्भ करने के पश्चात् सरकारी अस्पताल में आने वाले मरीजों का इलाज पूर्ण निष्ठा और ईमानदारी से नहीं कर पाते हैं, इसलिए उन पर प्रतिबंध आवश्यक है। डॉक्टर आलोक का मत सुनते ही वहाँ पर उपस्थित चिकित्सक-समूह ने विरोधस्वरूप उसके ऊपर कटु शब्दों की बौछार कर दी। कुछ मिनटों तक वह मौन होकर उनके विरोध को सहन करता रहा और अपने मत का निष्पक्ष विश्लेषण करता रहा कि क्या वास्तव में उसका मत अनुचित है। एक ओर उसके विश्लेषण का निष्कर्ष समाज कल्याण का समर्थन कर रहा था, तो दूसरी ओर उसको मोहन पाकर विरोधियों का स्वर और अधिक बुलंद होता जा रहा था यह देखकर आलोक का धैर्य छूट गया और उसने परिस्थिति से प्रेरित होकर उनके विरुद्ध मोर्चा सँभाल लिया। सर्वप्रथम उसने विरोधियों के समक्ष नम्रतापूर्वक अपना पक्ष रखने का प्रयास किया, किंतु वह विफल रहा। तत्पश्चात् उसने एक-एक चिकित्सक को ऊँचे स्वर में खरी-खरी सुनाना आरंभ कर दिया। डॉक्टर आलोक का ऊँचा स्वर सुनकर चिकित्सक-कक्ष में भीड़ एकत्रित होने लगी । धीरे-धीरे यह सूचना अस्पताल के प्रशासन तंत्र तक पहुँच गई और शीघ्र ही आलोक के पास विभागध्यक्ष डॉक्टर हिमांशु मौर्य के समक्ष उपस्थित होने का आदेश आ पहुँचा। आदेश प्राप्त होते ही डॉक्टर आलोक आदेश के पालन हेतु डॉक्टर हिमांशु मौर्य के कक्ष की ओर चल पड़ा। जाते-जाते वह सोच रहा था, "आखिर क्या कारण है कि मैं एक कर्मठ ईमानदार और अपने कर्तव्य के प्रति निष्ठावान चिकित्सक हूँ, फिर भी मात्र सात माह में सत्तर प्रतिशत वरिष्ठ चिकित्सकों के साथ मेरा वाद-विवाद हो चुका है। अपने स्टाफ के अधिकांश लोगों के साथ आए दिन किसी न किसी विषय पर मेरा विवाद होता ही रहता है! शायद मुझमें व्यवहार-कुशलता का अभाव है, जिसके कारण मेरा अपने स्टाफ के साथ ठीक से तालमेल नहीं बैठ पाता है!" उसको अपने अन्दर से मूक वाणी में उत्तर मिला, जिसे वह सहर्ष स्वीकार नहीं कर पा रहा था और मन ही मन अपने प्रश्न का सटीक-सन्तोषप्रद उत्तर खोजने का प्रयास कर रहा था।

विचार-मग्नावस्था में आलोक के कदम यंत्रवत आगे बढ़ते जा रहे थे । वह अपने प्रश्न का सन्तोषप्रद उत्तर खोज पाता इससे पहले ही उसके कदम विभागध्यक्ष डॉक्टर हिमांशु मौर्य के कक्ष में प्रवेश कर गए। कक्ष में प्रवेश करते ही डॉक्टर आलोक के कदम ठिठककर रुक गये । उसने देखा, डॉक्टर हिमांशु मौर्य की आँखें क्रोध से लाल हो रही थीं। यद्यपि वह आलोक की ही प्रतीक्षा कर रहे थे, तथापि

अनुमति माँगे बिना उनके कक्ष में आलोक के प्रवेश ने उनके क्रोध की आग में घी का काम किया। अपनी शक्ति का उपयोग करते हुए उन्होंने चेतावनी देते हुए आवेशयुक्त लहजे में कहा - "डॉक्टर आलोक! बहुत हो चुका! जिस दिन से आप आए हैं, उसी दिन से हर नियम का उल्लंघन कर रहे हैं। आपके अनुचित कार्य-व्यवहार से अस्पताल की शासन व्यवस्था चौपट होती है। मैं आपको पहले भी कई बार कह चुका हूँ, आपने अपने कार्य-व्यवहार में सुधार नहीं किया, तो मुझे तुम्हारे विरुद्ध एक्शन लेना पड़ेगा।"

"सर, आपने मुझे दो महीने का समय दिया है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ...."

"नो-नो, डॉ आलोक! दो नहीं, अब आपके पास केवल एक माह का समय है, ओनली वन मंथ...." डॉक्टर हिमांशु मौर्य ने आलोक का वाक्य बीच में ही काटते हुए पुनः चेतावनी दी।

"ओके सर! मैं प्रयास करूँगा, आपको मेरे विषय में किसी प्रकार की कोई शिकायत न मिले।"

"अब आप जा सकते हैं। ध्यान रहे, महीने का अंतिम दिन इस अस्पताल में आपका अंतिम दिन हो सकता है!" आलोक को अपने कार्य व्यवहारों को सुधारने के लिए समय-सीमा का स्मरण कराते हुए डॉक्टर हिमांशु मौर्य ने एक बार पुनः चेतावनी दी। डॉक्टर आलोक ने कक्ष से निकलते हुए मन ही मन संकल्प किया, "सर आपने मुझे एक महीना दिया है, लेकिन आपको अगले पन्द्रह दिन में ही मेरे व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन दिखने लगेगा। आज के बाद मैं हर विवाद को भूल कर अपना पूरा ध्यान अपने कर्तव्य पर केंद्रित करूँगा।"

विभागध्यक्ष-कक्ष से निकलकर आलोक कुछ ही कदम चला था कि एक अधेड़ स्त्री, जिसके हृदय का वात्सल्य आँखों से अश्रु-धारा के रूप में बह रहा था, सात-आठ वर्षीय कृशकाय बच्चे को अपने सीने से चिपकाए, विनती करते हुए आलोक का मार्ग रोककर उसके समक्ष खड़ी हो गई और एक लिफाफा उसकी ओर बढ़ाते हुए बोली - "डॉक्टर साहब! पर्चा देखकर बता दीजिए कि बच्चे को ये दवाइयाँ कैसे खिलानी हैं?"

अपने कर्तव्य के लिए समर्पित डॉक्टर आलोक ने लिफाफा हाथ में लेकर उसमे रखी दवाइयाँ बाहर निकालीं और अधेड़ स्त्री से पूछा - "इस पर्चे में आठ दिन की दवाइयाँ लिखी गयी हैं, आप केवल दो दिन की ही दवाईयाँ क्यों लाई हो?"

"डॉक्टर साहब! इतने ही पैसे थे मेरे पास।"

"बीच में दवाइयाँ बंद करने से इलाज का कोई लाभ नहीं होगा, उल्टा नुकसान होने की संभावना बढ़ जाती है। स्त्री चुप खड़ी रही। कितने पैसे की आई हैं ये दवाइयाँ?" आलोक ने स्त्री से पूछा।

"आठ सौ रुपये की आयी हैं डॉक्टर साहब।"

"आपके पति क्या काम करते हैं?" स्त्री की आर्थिक दशा का अनुमान लगाने के उद्देश्य से आलोक ने पूछा।

"पति परलोक सिधार गए हैं, घरों में झाड़ू–बर्तन करके बच्चे का और अपना गुजारा करती हूँ।"

"बच्चे की कुछ जाँच कराई गयी होगी, उनकी रिपोर्ट्स हैं आपके पास?" स्त्री ने टैस्ट-रिपोर्ट्स का पुलिंदा आलोक की ओर बढ़ा दिया। रिपोर्ट्स देखकर आलोक ने कुछ सोचकर कहा - "हूँ-ऊँ-ऊँ...! ऐसा करता हूँ, मैं आपके बच्चे के लिए सस्ती जेनेरिक दवाइयाँ लिख देता हूँ। जितने पैसों में यह दवाइयाँ दो दिन के लिए आयी हैं, उतने ही पैसों में जेनरिक दवाइयाँ पूरे सप्ताह-भर के लिए आ जाएँगी।"

"डॉक्टर साहब, सस्ती दवाइयाँ खाकर मेरा बच्चा ठीक हो सकता है।"

"हाँ! बिल्कुल, जो काम यह महँगी दवाइयाँ करेंगी, वही काम सस्ती जेनेरिक दवाइयाँ भी करेंगी।"

"तो फिर लिख दीजिए डॉक्टर साहब, आपकी बड़ी कृपा होगी। महँगाई के इस जमाने में मुझ गरीब के लिए पेट का टुकड़ा जुटाना भारी है डॉक्टर साहब, आप मेरे बच्चे को ठीक कर दो, महँगी-महँगी जाँच और दवाइयों की कमी में मेरा बच्चा मर जाएगा।"

"घबराओ नहीं, कुछ नहीं होगा आपके बच्चे को।" सांत्वना देते हुए आलोक ने अपनी जेब से पैन और छोटी-सी डायरी निकालकर उसमें से एक पर्चा निकाला और उस पर दवाइयाँ लिखकर स्त्री की ओर बढ़ाते हुए कहा - "इन दवाइयों को ले आओ और मुझे बता दो, मैं समझा दूँगा, कब कौन-सी दवाई लेनी है।"

आलोक के हाथ से दवाई लिखा हुआ पर्चा लेकर स्त्री बच्चे को सीने से लगाये हुए चली गयी। उस की दयनीय दशा से द्रवीभूत आलोक तब तक उसको जाते हुए देखता-सोचता रहा, जब तक कि वह उसकी आँखों से ओझल नहीं हो गयी । कुछ क्षणों तक वहाँ खड़े रहने के पश्चात् आलोक चिकित्सक-कक्ष में आकर बैठ गया और अपनी विषम परिस्थिति पर विचार करने लगा। विचार करते-करते उसको यह स्मरण ही नहीं रहा कि उसने स्त्री को दवाई लाकर दिखाने के लिए कहा था। यद्यपि आलोक को जब उस स्त्री का स्मरण हुआ तब तक पर्याप्त देर हो चुकी थी, फिर भी वह यथाशीघ्र कमरे से बाहर आकर स्त्री को खोजने लगा। आलोक को खोजते-खोजते निराश होकर स्त्री ने एक अन्य डॉक्टर वैभव को दवाइयाँ दिखा दीं। यह अन्य डॉक्टर वही था जिसने स्त्री के बच्चे के लिए महँगी दवाइयाँ लिखी थीं। स्त्री के पास जेनेरिक दवाइयाँ देखते ही वैभव ने झल्लाकर सारी दवाइयों को फर्श पर फेंक दिया और उस स्त्री पर जोर से चीखा - "किससे लिखायी हैं ये बेकार-घटिया दवाइयाँ? तुम्हारे बच्चे का इलाज मैं कर रहा हूँ या वह? जाओ, उसी से इलाज कराना अपने बच्चे का। तुम्हारे बच्चे को ठीक करने की अब मेरी कोई जिम्मेदारी नहीं है।"

स्त्री अपने बच्चे का इलाज कराने के लिए डॉक्टर के सामने गिड़गिड़ाती हुई प्रार्थना कर रही थी और वह डॉक्टर बार-बार उसका तिरस्कार करके अपनी प्रभुता का डंका बजा रहा था। उसी समय डॉक्टर आलोक वहाँ पहुँच गया। उसने फर्श पर बिखरी पड़ी दवाइयों को उठाकर स्त्री के हाथों में थमाते हुए डॉक्टर वैभव से कहा - "डॉक्टर वैभव! यह मेडिसिन आपने फर्श पर क्यों फेंकीं हैं? क्या कमी है इन

दवाइयों में? बस यही न कि इनसे तुम्हारा कमीशन नहीं मिलेगा?" आलोक के अंतिम वाक्य ने वैभव के क्रोध की आग में घी का काम किया -"तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई मेरे मरीज के लिए मेरे द्वारा लिखी दवाइयों को वापस कराके जेनेरिक दवाइयाँ मँगाने की! मेरे मरीज के विषय में कुछ भी निर्णय लेने का अधिकार तुम्हें किसने दिया? डॉक्टर आलोक! तुम्हें अपनी इस गलती की सजा भुगतनी पड़ेगी।" धमकी देकर डॉक्टर वैभव पैर पटकते हुए उसी समय बाहर चला गया। उस डॉक्टर के जाने के पश्चात् आलोक ने बच्चे को दवाई देने के विषय में स्त्री को समझाते हुए कहा -"घबराओ नहीं, बच्चे को कोई गंभीर बीमारी नहीं है। जो दवाइयाँ मैंने लिखी हैं, इनसे बच्चा बिल्कुल ठीक हो जाएगा। एक सप्ताह पश्चात् आकर मुझे बताना बच्चे की हालत में कितना सुधार है। महँगी दवाइयों से इन डॉक्टर्स लोगों को कमीशन मिलता है, इसलिए इन्हें गुस्सा आ रहा था। आप निश्चिंत होकर घर जाओ।"

स्त्री के जाने के पश्चात् आलोक ने चैन की एक लंबी गहरी साँस ली। एक मनुष्य के रूप में असहाय स्त्री और उसके बच्चे की सहायता करके उसकी आत्मा संतुष्ट थी और एक डॉक्टर के रूप में पूरी निष्ठा और ईमानदारी के साथ अपने कर्तव्य को पूर्ण करके उसे अकथनीय सुख की अनुभूति हो रही थी। अब वह बहुत प्रसन्न था। इस अस्पताल में नियुक्ति पाने के दिन से आज तक जिस अनुपात में वह इमानदारी के गड्ढे में गिरता जा रहा था, उसी अनुपात में उसके विरोधियों की संख्या में वृद्धि हो रही थी और उसी अनुपात में उसके प्रति डॉक्टर मौर्य के असंतोष का ग्राफ ऊपर उठ रहा था। ऐसी विषम परिस्थिति के फलस्वरूप उसकी प्रसन्नता और आत्मसंतुष्टि गिनती के कुछ क्षणों से अधिक नहीं टिक सकी। उस स्त्री के जाते ही डॉक्टर आलोक डॉक्टर मौर्य के समक्ष उपस्थित होने का आदेश मिल गया। यह न जानते हुए भी कि विभागाध्यक्ष ने उसको क्यों बुलाया है? यह सोचकर कि स्त्री की सहायता करके उसने बहुत अच्छा काम किया है, वह पर्याप्त आत्मविश्वास और गर्व के साथ विभागाध्यक्ष-कक्ष की ओर चल दिया। आलोक विभागाध्यक्ष डॉक्टर मौर्य के कक्ष के द्वार तक पहुँचा ही था, उसने कक्ष में प्रवेश भी नहीं किया था, तभी अंदर से कठोर शैली में कड़क स्वर उभरा - "डॉ आलोक! पन्द्रह मिनट पहले आप हमें विश्वास दिला रहे थे कि आप अपने कार्य-व्यवहार में सुधार करेंगे! लेकिन, अब आपने सिद्ध कर दिया कि आप इस अस्पताल में अपनी सेवाएँ नहीं देना चाहते हैं, या कहें कि आप किसी भी अस्पताल में सेवा का अवसर पाने योग्य नहीं है, क्योंकि आपमें सामंजस्य करने की योग्यता बिल्कुल नगन्य हैं।"

"लेकिन सर, यह तो बताइए, मैंने अनुचित क्या किया है?"

"वाह! अब यह भी मुझे बताना पड़ेगा कि किसी दूसरे डॉक्टर के अधिकार-क्षेत्र में जाकर तुम उसके मरीजों में उसके प्रति अविश्वास और घृणा पैदा करते हो और मुझसे पूछते हो, तुमने अनुचित क्या किया है?"

"सर, आप एक बार मेरी दृष्टि से देखने का प्रयास कीजिए, आपको ज्ञात हो जाएगा मैंने कुछ अनुचित नहीं किया है।"

"मिस्टर आलोक! मेरे पास मेरी अपनी दृष्टि है। मैं तुम्हारी दृष्टि से देखने का प्रयास क्यों करूँ? पन्द्रह दिन.... पन्द्रह दिन में तुमने अपना रवैया नहीं बदला तो सोलहवें दिन तुम इस अस्पताल में पैर नहीं रख सकोगे, यह मेरा तुमसे वचन है।"

पर सर, कुछ मिनट पहले ही आपने मुझे एक माह का समय दिया था?" आलोक ने संशययुक्त ढंग से पूछा।

"एक सप्ताह ....! एक सप्ताह का समय है, तुम्हारे पास।"

"सर, अभी तो पन्द्रह दिन का समय दिया था आपने?"

"ओफ्फो! तुम जैसे जाहिल गँवार के साथ मैं क्यों अपना समय बर्बाद कर रहा हूँ! तुम्हारी बकवास सुनकर मेरा सिर फटने लगा है। निकल जाओ, मेरे रूम से। आउट....आउट...." डॉ हिमांशु मौर्य ने दोनों हाथों से सिर पकड़कर चिल्लाते हुए कहा।

आलोक ने शांत भाव से कमरे से बाहर निकल कर एक बार मन ही मन पुनः संकल्प किया, "सॉरी सर! आज मैं आपको अपने पक्ष से सहमत नहीं कर सका, लेकिन कर्तव्य के प्रति मेरी निष्ठा और इमानदारी देखकर एक दिन आप अवश्य मानेंगे कि मैंने कभी कुछ अनुचित नहीं किया । और वह दिन शीघ्र ही आएगा।"

अगले दिन अस्पताल में पहुँचते ही डॉक्टर आलोक का एक वृद्ध से सामना हुआ। उस वृद्ध की कमर झुकी हुई थी। त्वचा सिकुड़ रही थी। वह शरीर पर फटे मैले वस्त्र पहने हुए थे और उनकी वाणी में अत्यधिक दीनता थी। वृद्ध ने किसी अन्य डॉक्टर का पर्चा दिखाते हुए आलोक से प्रार्थना की - "डॉक्टर साहब! मैं बहुत गरीब हूँ। रिक्शा चलाकर पेट पालता हूँ। बाहर से एक्स-रे करवाने को पैसे नहीं है मेरे पास, अस्पताल में ही करा दो! भगवान आपका भला करेगा।"

"आपके साथ कौन है?"

"कोई नहीं है डॉक्टर साहब....अकेला हूँ। भरी-पूरी दुनिया में भगवान के सिवा मेरा अपना कोई नहीं है।" आलोक ने पर्चा उलटते-पलटते हुए "हूँ-ऊँ-ऊँ" कहा और कुछ क्षण के लिए मौन हो गया, क्योंकि जाँच के लिए पर्चा उसके विभागाध्यक्ष डॉक्टर द्वारा लिखा गया था। कुछ क्षणों तक मौन रहने के पश्चात् डॉक्टर आलोक ने वृद्ध से कहा- "अस्पताल में तो नहीं हो सकेगा आपका एक्स-रे। शायद यहाँ की मशीन खराब हो गई है। सर को क्यों नहीं बताया आपने अपनी समस्या जिन्होंने आपके लिए यह एक्स-रे जाँच लिखी है?"

"उनसे भी बहुत विनती की थी, पर उन्होंने नहीं सुनी।" वृद्ध ने दीनतापूर्वक उत्तर दिया।

"हूँ-ऊँ-ऊँ !" कहकर डॉक्टर आलोक कुछ क्षणों तक यथास्थान मौन खड़ा खड़े रहे। तत्पश्चात् वृद्ध से बोले, "आओ, मेरे साथ" यह कहते हुए डॉक्टर आलोक अस्पताल से बाहर की ओर चल दिये। वृद्ध भी उसके पीछे-पीछे चल दिया। लगभग दो सौ मीटर चलने के पश्चात् आलोक ने 'विभूति एक्स-रे सेंटर' में प्रवेश किया। आलोक द्वारा एक्स-रे शुल्क पूछने पर वहाँ पर बैठे रिसेप्शनिस्ट ने जाँच लिखने वाले डॉक्टर का पर्चा माँगा। पर्चा देखकर उसने बताया - "साढ़े तीन सौ रुपये।"

"साढ़े तीन सौ रुपये! साढ़े तीन सौ रुपये तो बहुत अधिक हैं?" आलोक आश्चर्य व्यक्त करते हुए आगे बढ़ गया। कुछ ही कदमों की दूरी पर 'हर्षित रेडियोलोजी एंड डिजिटल एक्स-रे सेंटर' था। उस क्लीनिक पर आलोक ने सर्वप्रथम अपना परिचय दिया। तत्पश्चात् एक्स-रे शुल्क के संबंध में पूछा। उस समय आलोक हतप्रभ रह गया जब आलोक द्वारा पूछे गए प्रश्न के उत्तरस्वरूप आलोक से प्रतिप्रश्न पूछा गया - "सर इसमें आपका शेयर कितना होगा? मेरा शेयर? मैं समझा नहीं!"

"सर, आइ मीन 'पर एक्स-रे' आप कितने परसेंट कट लेंगे?"

"कट! नहीं-नहीं, मुझे कोई कट नहीं चाहिए! मैं चाहता हूँ, आप जितना संभव हो सके, कम से कम शुल्क लेकर गरीब लोगों को एक्स-रे सर्विस प्रोवाइड करें।"

"सर हमारे यहाँ विदाउट कट एक्स-रे दो सौ रुपये में होता है। सर, हमारे यहाँ अल्ट्रासाउंड भी होता है। आप यहाँ जितने पेशेंट भेजेंगे, उनकी जाँच कम से कम शुल्क में की जाएगी।"

"ठीक है" यह कहते हुए आलोक ने अपनी जेब से दो सौ रुपये निकाल कर दे दिये और वृद्ध को तनाव मुक्त होकर एक्स-रे कराने के लिए कहकर पुनः अस्पताल लौट आया ।

'हर्षित रेडियोलॉजी एंड एक्स-रे सेंटर' से अस्पताल तक आते-आते रास्ते में आलोक एक ही विषय पर सोचता रहा। 'पर एक्स-रे आप कितना कट लेंगे' इसका आशय है कि डॉक्टर हिमांशु मौर्य भी कट लेते हैं! शायद इसीलिए वह मेरे विरुद्ध इतनी सहजता से अन्य डॉक्टर्स के साथ खड़े हो जाते हैं। यह विचार मस्तिष्क में आते ही आलोक के हृदय में अपने विभागाध्यक्ष डॉक्टर हिमांशु मौर्य के प्रति श्रद्धा कम हो गयी। कुछ ही समय में श्रद्धा का स्थान घृणा ने ले लिया था। यद्यपि उसने अपने व्यवहार में घृणा का अंश-मात्र नहीं घुलने दिया था, तथापि कार्य संबंधी उसके निर्णय में विद्रोह-भाव पहले की अपेक्षा अधिक मुखर हो चला था। उसी दिन उसने वार्ड में जाकर सूक्ष्म निरीक्षण किया कि कितने मरीजों को एक्स-रे या अल्ट्रासाउंड कराने के लिए कहा गया है। अपने निरीक्षण में आलोक को कई मरीज ऐसे भी मिले, जिन्हें अनावश्यक रुप से एक्स-रे और अल्ट्रासाउंड कराने के लिए कहा गया था। आलोक ने ऐसे मरीजों को अलग सूचीबद्ध कर लिया और शेष मरीजों को बताया कि 'विभूति एक्स-रे सेंटर' से कुछ कदम आगे ही 'हर्षित रेडियोलोजी एंड डिजिटल एक्स-रे सेंटर' में अन्य किसी भी रेडियोलॉजिस्ट की अपेक्षा बढ़िया क्वालिटी का एक्स-रे और अल्ट्रासाउंड आधे शुल्क में हो जाता है।

आलोक द्वारा दी गई जानकारी सभी मरीजों के लिए फायदे का सौदा थी, इसलिए सभी ने तत्काल निर्णय लिया कि 'हर्षित एक्स-रे सेंटर' से ही एक्स-रे अथवा अल्ट्रासाउंड कराएँगे ।

तीसरे दिन शाम को आलोक अस्पताल के बाहर प्राइवेट पैथोलॉजी लैब में गया। वहाँ पर भी जाँच करने के लिए दो दरें निर्धारित थीं - विद कट और विदआउट कट। दोनों दरों में पर्याप्त अंतर था। पैथोलॉजी लैब के कट-सिस्टम को बंद करने के लिए घंटों तक चिंतन मनन किया। अन्ततः उसको एक उपाय सूझा। कट-सिस्टम से चलने वाली पैथोलॉजी लैब के विकल्पस्वरूप उसने अस्पताल से अपेक्षाकृत कुछ दूर स्थित 'नसीम पैथोलॉजी लैब' खोज निकाली जहाँ पर कम दर पर सभी प्रकार की जाँच की जाती थी।

चौथे दिन आलोक ने गुप्त रूप से सूक्ष्म निरीक्षण किया, जिसमें उसको ज्ञात हुआ कि अधिकांशतः डॉक्टर्स अपने कमीशन के लोभवश मरीजों की अनेक प्रकार की अनावश्यक जाँच लिख रहे हैं। पिछले दिन की भाँति आलोक ने ऐसे मरीजों को अलग सूचीबद्ध किया और सभी को आवश्यकता पड़ने पर जाँच कराने के लिए 'नसीम पैथ लैब' के विषय में बताया। उसके बाद आलोक ने दस दिन तक इसी प्रकार 'कट विरोधी अभियान' चलाया। इन दस दिनों में आलोक का किसी न किसी विषय पर अपने कई वरिष्ठ चिकित्सकों के साथ विवाद भी हुआ, लेकिन इससे उसने अपने अभियान को प्रभावित नहीं होने दिया।

ग्यारहवें दिन जब आलोक अस्पताल में पहुँचा, हर एक आँख उसको विचित्र ढंग से घूर रही थी। उसने अनुभव किया कि कुछ आँखों में उसके प्रति उपेक्षा का भाव था; कुछ में उपहास का; कुछ में तिरस्कार का तो कुछ आँखों में उसके प्रति सहानुभूति का भाव झलक रहा था। वह कुछ और आगे बढ़ा, तो उसको डॉक्टर हिमांशु मौर्य का आदेश मिला कि सीधे उनके कक्ष में आकर मिले। आत्मविश्वास से परिपूर्ण डॉ आलोक आदेश का पालन करते हुए तत्काल विभागाध्यक्ष-कक्ष में जा पहुँचा। उसके पहुँचते ही डॉक्टर हिमांशु मौर्य ने सीमित शब्दों और संयत शैली में कहा - "डॉ आलोक! मैंने आपको आपका आचरण ठीक रखने के लिए पन्द्रह दिन का समय दिया था, लेकिन मेरी चेतावनी के बावजूद आपके आचरण में अंशमात्र भी सुधार नहीं हुआ है। आपके विरुद्ध मेरे पास शिकायतों का अंबार लगा पड़ा है। अब मुझे आपके विरुद्ध कार्यवाही करनी ही पड़ेगी। समझ लीजिए, इस अस्पताल में कल आपका अंतिम दिन है।"

"जी सर! लेकिन सर, आपके दिए हुए समय यानी पन्द्रह दिन में एक दिन अभी शेष है न?" आलोक ने शांत भाव से व्यंगात्मक शैली ने कहा।

"हाँ, आज का दिन शेष है। आप जा सकते हैं और आज अपनी ड्यूटी कर सकते हैं।" डॉक्टर हिमांशु मौर्य में उपेक्षापूर्वक कहा, "हँ-अँ, आज सुधारेंगे यह अपना आचरण!"

डॉक्टर मौर्य की चेतावनी के बाद भी आलोक ने कट विरोधी अपना अभियान बंद नहीं किया, बल्कि उसी दिन उसने अपनी पूरी सामर्थ्य से अधिक अभियान चलाया।

अगले अर्थात पन्द्रहवें दिन जब आलोक अस्पताल पहुँचा, डॉक्टर हिमांशु मौर्य अस्पताल में कार्यरत एक बड़े चिकित्सक-समूह के साथ आलोक के स्वागतार्थ खड़े हुए थे। डॉक्टर मौर्य के हाथ में विभिन्न चिकित्सकों के नाम सहित हस्ताक्षर की एक लंबी सूची थी। सूची को दिखाते हुए डॉक्टर मौर्य ने आलोक से कहा - "डॉक्टर आलोक! इन सभी डॉक्टर्स ने आपके विरुद्ध लिखित शिकायत की है। इनके शिकायत-पत्र मेरे पास सुरक्षित हैं। आपसे हमारा आग्रह है कि आप स्वयं रिजाइन कर दें, अन्यथा इस सूची के साथ आपके विरुद्ध आए हुए शिकायत-पत्र अस्पताल प्रशासन को दे दिए जाएँगे। यदि हमें ऐसा करने की आवश्यकता पड़ी, तब आप का कैरियर चौपट हो जाएगा, जिसके जिम्मेदार आप स्वयं होंगे।"

डॉक्टर आलोक बायाँ हाथ दायीं बगल में तथा दायीं हथेली ठुड्डी के नीचे लगाकर मौन खड़ा हुआ डॉक्टर मौर्य की चेतावनी सुन रहा था। मौर्य की चेतावनी समाप्त होने के पश्चात् वह धीरे से मुस्कुराया और दो-तीन मिनट तक अपने एंड्राइड मोबाइल पर अंगुली चलाता रहा। तत्पश्चात् अत्यधिक लापरवाही से मस्त अन्दाज़ में बोला - "डॉक्टर मौर्य! मैं रिजाइन नहीं करूँगा, भले ही आपके पास मेरे विरुद्ध शिकायत-पत्रों का अंबार है और शिकायतकर्ताओं की लंबी सूची है, परंतु आप में से कोई भी अस्पताल प्रशासन से मेरी शिकायत नहीं करेगा। डॉक्टर मौर्य! आप और आपके ये सभी साथी 'विभूति एक्स-रे सेंटर' से, 'अभिषेक पैथोलॉजी लैब' से और 'मेडिकल स्टोर्स से इतना कट मारते हैं कि आपको उससे मिलने वाली राशि आपके वेतन से भी अधिक होती है, यह मैं भली-भाँति जानता हूँ। संबंधित प्रमाण की थोड़ी-सी बानगी आप सब अपने-अपने मोबाइल ऑन करके अपने वाट्सअप पर देख सकते हैं।" डॉक्टर आलोक की चुनौती सुनकर सभी डॉक्टर अपना-अपना मोबाइल ऑन करके अपना वाट्सअप अकाउंट देखने लगे।

आलोक ने पुनः कहा - "डॉक्टर मौर्य, बचपन में मैंने सुना था कि पाप का घड़ा भरकर फूटता है। लेकिन घड़ा तो बहुत छोटी चीज है, आप तो पाप के समुद्र में तैर रहे हैं। आपको लगता है कि आप लोग डूब नहीं रहे हैं इसलिए कोई संकट नहीं है। परंतु, आप यह भूल रहे हैं कि यदि कोई मनुष्य निरंतर कुछ समय तक समुद्र में रहे तो समुद्र का खारापन उसके अंग-प्रत्यंग को गलाकर नष्ट कर देता है। आप तो खारे पानी के समुद्र से अधिक घातक पाप के समुद्र में विचरण कर रहे हैं, फिर बताइए आप कैसे बच सकते हैं?"

आलोक का वाक्य समाप्त होने पर सभी डॉक्टर्स वाट्सअप पर 'कट-सिस्टम' में अपनी संलिप्तता के प्रमाण देख चुके थे।

'विभूति एक्स-रे सेंटर' पर अपने कट के लिए लड़ते हुए डॉक्टर हिमांशु मौर्य का वीडियो देखकर सभी हैरान थे, जिसमें वह कह रहे थे - "मैं डेली आठ से दस पेशेंट यहाँ भेज रहा हूँ और आप

कह रहे हैं कि मैंने एक भी पेशेंट नहीं भेजा है? पूरा एक सप्ताह हो चुका है आपने मुझे मेरे कमीशन का एक भी पैसा नहीं दिया है। यदि ऐसे ही चलता रहा तो देख लेना, मैं तुम्हारा सेंटर बिल्कुल बंद करा दूँगा।"

इसी प्रकार लड़ते हुए अन्य डॉक्टर्स के वीडियो भी वाट्सअप पर अपलोड किए गए थे जिन्हें देख-सुनकर सभी हैरान-परेशान थे। सभी एक-दूसरे का मुँह ताक रहे थे। आलोक उन सबको देखकर शांत भाव से मुस्कुरा रहा था। शीघ्र ही धीरे-धीरे एक-एक करके सभी डॉक्टर्स वहाँ से खिसकने लगे।

आलोक ने एक बार पुनः ऊँचे स्वर में चुनौती की मुद्रा में कहा - "आशा है कि आप लोग भविष्य में मेरी शिकायत करने की भूल नहीं करेंगे, न ही मेरी राह का रोड़ा बनने का प्रयास करेंगे, अन्यथा एक क्लिक में ये प्रमाण-सामग्री अस्पताल प्रशासन और उससे ऊपर तक भी जा सकती है।" यह कहकर आलोक डॉक्टर हिमांशु मौर्य के निकट का आकर बोले - "डॉक्टर मौर्य! आप मुझे कभी निलंबित नहीं करा सकेंगे। हाँ! यदि आपने अपने आचरण में परिवर्तन नहीं किया तो मैं आपका निलंबन अवश्य करा दूँगा, आपसे यह मेरा वचन है। याद रखिएगा।"

डॉक्टर आलोक की चेतावनी सुनकर डॉक्टर हिमांशु मौर्य घायल शेर की भाँति घूरते हुए वहाँ से प्रस्थान कर गए और तत्क्षण आलोक भी अपनी ड्यूटी के लिए आगे बढ़ गया।

ग़ज़ल
प्राण शर्मा

क्यों न उसमें प्यार हो, मनुहार हो, सत्कार हो
क्यों भला इंसान का इंसान से तकरार हो
क्यों भला वे रोटी-पानी के लिए तड़पें कभी
क्यों भला कुछ औरतों के जिस्मों का व्यापार हो
अपहरण बच्चों का जो करते हैं मेरे दोस्तो
उठ न पाएँ वे कभी कुछ ऐसी उन पर मार हो
गर सुनानी है तो कुछ ऐसी सुनाओ तुम कथा
जिसको सुनने के लिए हर वक़्त मन तैयार हो
ज़िंदगी चलती रहे हँसते हुए, गाते हुए
यूँ लगे जैसे कि वीणा की मधुर झंकार हो
'प्राण' खुशियों के सदा कुछ लोग ही मालिक हों क्यों
क्यों न हर प्राणी जगत में खुशियों का हक़दार हो

राम, कृष्ण और शिव

डॉ. राममनोहर लोहिया

दुनिया के देशों में हिंदुस्तान किंवदंतियों के मामले में सबसे धनी है। हिंदुस्तान की किंवदंतियों ने सदियों से लोगों के दिमाग पर निरंतर असर डाला है। इतिहास के बड़े लोगों के बारे में, चाहे वे बुद्ध हों या अशोक, देश के चौथाई से अधिक लोग अनभिज्ञ हैं। दस में एक को उनके काम के बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी होगी और सौ में एक या हजार में एक उनके कर्म और विचार के बारे में कुछ विस्तार से जानता हो तो अचरज की बात होगी। देश के तीन सबसे बड़े पौराणिक नाम - राम, कृष्ण और शिव - सबको मालूम हैं। उनके काम के बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी प्राय: सभी को, कम से कम दो में एक को तो होगी ही। उनके विचार व कर्म, या उन्होंने कौन-से शब्द कब कहे, उसे विस्तारपूर्वक दस में एक जानता होगा। भारतीय आत्मा के लिए तो बेशक और कम से कम अब तक के भारतीय इतिहास की आत्मा के लिए और देश के सांस्कृतिक इतिहास के लिए, यह अपेक्षाकृत निरर्थक बात है कि भारतीय पुराण के ये महान लोग धरती पर पैदा हुए भी या नहीं।

राम और कृष्ण शायद इतिहास के व्यक्ति थे और शिव भी गंगा की धारा के लिए रास्ता बनानेवाले इंजीनियर रहे हों और साथ-साथ एक अद्वितीय प्रेमी भी। इनको इतिहास के परदे पर उतारने की कोशिश करना, और ऐसी कोशिश होती भी है, एक हास्यास्पद चीज होगी। संभावनाओं की साधारण कसौटी पर इनकी जीवन कहानी को कसना उचित नहीं। सत्य का इससे अधिक आभास क्या मिल सकता है कि पचास या शायद सौ शताब्दियों से भारत की हर पीढ़ी के दिमाग पर इनकी कहानी लिखी हुई है। इनकी कहानियाँ लगातार दुहराई गई हैं। बड़े कवियों ने अपनी प्रतिभा से इनका परिष्कार किया है और निखारा है तथा लाखों-करोड़ों लोगों के सुख और दु:ख इनमें घुले हुए हैं।

किसी कौम की किंवदंतियाँ उसके दु:ख और सपनों के साथ उसकी चाह, इच्छा और आकांक्षाओं का प्रतीक हैं, तथा साथ-साथ जीवन के तत्व उदासीनता और स्थानीय व संसारी इतिहास का भी। राम और कृष्ण और शिव भारत की उदासी और साथ-साथ रंगीन सपने हैं। उनकी कहानियों में एकसूत्रता ढूँढना या उनके जीवन में अटूट नैतिकता का ताना-बाना बुनना या असंभव व गलत लगनेवाली चीजें अलग करना उनके जीवन का सब कुछ नष्ट करने जैसा होगा। केवल तर्क बचेगा। हमें बिना हिचक के मान लेना चाहिए कि राम और कृष्ण और शिव कभी पैदा नहीं हुए, कम से कम उस रूप में, जिसमें कहा जाता है। उनकी किंवदंतियाँ गलत और असंभव हैं। उनकी श्रृंखला भी कुछ मामले में बिखरी है जिसके फलस्वरूप कोई तार्किक अर्थ नहीं निकाला जा सकता। लेकिन यह स्वीकारोक्ति बिल्कुल अनावश्यक है। भारतीय आत्मा के इतिहास के लिए ये तीन नाम सबसे सच्चे हैं और पूरे कारवाँ में महानतम हैं। इतने ऊँचे और इतने अपूर्व हैं कि दूसरों के मुकाबले में गलत और असंभव दीखते हैं। जैसे पत्थरों और धातुओं पर इतिहास लिखा मिलता है वैसे ही इनकी कहानियाँ लोगों के दिमागों पर अंकित हैं जो मिटाई नहीं जा सकतीं।

भारत की पहाड़ियों में देवी-देवताओं का निवास माना जाता है जिन्होंने कभी-कभी मनुष्य रूप में धरती पर आ कर बड़ी नदियों के साँपों को मारा है या पालतू बनाया है और भक्त गिलहरियों ने समुद्र बाँधा है। रेगिस्तानी इलाकों के दैवी विश्वास यहूदी, ईसाई और इस्लाम से सभी देवता मिट चुके हैं, सिवा एक के, जो ऊपर और पहुँच के बाहर हैं, तथा उनके पहाड़, मैदान और नदियाँ किंवदंतियों से शून्य हैं। केवल पढ़े-लिखे लोग या पुरानी गाथाओं की जानकारी रखनेवाले लोग माउंट ओलिपंस के

देवताओं के बारे में जानते हैं। भारत में जंगलों पर अटूट विश्वास और चंद्रमा का जड़ी-बूटी, पहाड़, जल और जमीन के साथ हमेशा चलनेवाला खिलवाड़ देवताओं और उनके मानवीय रूपों को सजीव रखता है व इनमें निखार लाता है। किंवदंतियाँ कथा नहीं हैं। कथा शिक्षक होती है। कथा का कलाकृति होना या मनोरंजक होना उसका मुख्य गुण नहीं, उसका मुख्य काम तो सीख देना है। किंवदंतियाँ सीख दे सकती हैं, मनोरंजन भी कर सकती हैं, लेकिन इनका मुख्य काम दोनों में से एक भी नहीं है। कहानी मनोरंजन करती है। बालजाक और मोपाँसा और ओ. हेनरी ने अपनी कहानियों द्वारा लोगों का इतना मनोरंजन किया कि उनकी कौमों के दस में एक आदमी उनके बारे में अच्छी तरह जानता है। इससे उनके जीवन में बेशक गहराई और बड़प्पन आता है। बड़ा उपन्यास भी मनोरंजन करता है यद्यपि उसका असर उतना जाहिर तो नहीं लेकिन शायद गहरा अधिक होता है।

किंवदंती असंख्य चमत्कारी कहानियों से भरे प्राय: अनंत उपन्यास की तरह है। इनसे अगर सीख मिलती है तो केवल अपरोक्ष रूप से। ये सूरज, पहाड़ या फल-फूल जैसी हैं और हमारे जीवन का प्रमुख अंश हैं। आम और सतालू हमारे शरीर-तंतु बनाते हैं - वे हमारे रक्त और माँस में घुले हैं। किंवदंतियाँ लोगों के शरीर-तंतु की अवयव हैं - ये उनके रक्त-माँस से घुली-मिली होती हैं। इन किंवदंतियों को महान लोगों के जीवन के पवित्र नमूने के रूप में देखना एक हास्यास्पद मूर्खता होगी। लोग अगर इनको अपने आचार-विचार के नमूने के रूप में देखेंगे तो राम, कृष्ण और शिव की प्रतिष्ठा को नीचे गिराएँगे। वे पूरे भारत के तंतु और रक्त-माँस के हिस्से हैं। उनके संवाद और उक्तियाँ, उनके आचार और कर्म, उनके भिन्न-भिन्न मौकों पर किए काम और उसके साथ उनकी भ्रू-भंगिमा और उनके ठीक वही शब्द जो उन्होंने किसी खास मौके पर कहे थे, ये सब भारतीय लोगों की जानी-पहचानी चीजें हैं। ये सचमुच एक भारतीय की आस्था और कसौटी हैं, न केवल सचेत दिमागी कोशिश के रूप में बल्कि उस रूप में भी जैसे रक्त की शुद्धता पर स्वस्थ या रुग्ण होना या न होना निर्भर होता है।

किंवदंतियाँ एक तरह से महाकाव्य और कथा, कहानी और उपन्यास, नाटक और कविता की मिली-जुली उपज हैं। किंवदंतियों में अपरिमित शक्ति है और ये अपनी कौम के दिमाग का अंश बन जाती हैं। इन किंवदंतियों में अशिक्षित लोगों को भी सुसंस्कृत करने की ताकत होती है। लेकिन उनमें सड़ा देने की क्षमता भी होती है। थोड़ा अफसोस होता है कि ये किंवदंतियाँ बुनियाद में विश्ववादी होते हुए भी स्थानीय रंग में रँगी होती हैं। इससे लगभग वैसा ही अफसोस होता है, जैसा हर काल के, हर मनुष्य के, एक साथ और एक स्थान पर न रहने रहने से होता है। मनुष्य जाति को अलग-अलग जगहों पर बिखर कर रहना होता है और इन जगहों की नदियाँ और पहाड़, लाल या मोती देनेवाले समुद्र अलग हैं। विश्ववाद की जीभ स्थानीय ही होगी। यह समस्या स्त्री-पुरुष और उनके बच्चों की शिक्षा के लिए बराबर बनी रहेगी। अगर विश्ववाणी से स्थानीय रंग दूर किया जाए तो इस प्रक्रिया में भावनाओं का चढ़ाव-उतार खत्म हो जाएगा, उनका रक्त सूख जाएगा और वह एक पीले साए के समान रह जाएगी। पिता राइन, गंगा मैया और पुनीत अमेजन सब एक चीजें हैं, लेकिन उनकी कहानी अलग-अलग है। शब्द के मतलब कुछ और भी होते हैं, सिवाय उनके नाम या जिसके लिए उसका इस्तेमाल होता है। इनका पूरा मतलब और मजा उस स्थान और उसके इतिहास से लगातार रिश्ता होने पर ही मिल सकता है। गंगा एक ऐसी नदी है जो पहाड़ियों और घाटियों में भटकती फिरती है, कलकल निनाद करती है, लेकिन उसकी गति एक भारी-भरकम शरीरवाली औरत के समान मंदगामिनी है। गंगा का नाम गम् धातु से बना है जिससे गमगम संगीत बनता है, जिसकी ध्वनि सितार की थिरकन के समान मधुर है। भारतीय शिल्प कला के लिए, घड़ियाल पर गंगा और कछुए पर उसकी छोटी बहन जमुना, एक रुचिकर विषय है। यदि अनामी मूर्तियों को शामिल न किया जाए, तो वे भारतीय महिलाओं के

प्रस्तर रूप की सर्वश्रेष्ठ सुंदरियाँ हैं। गंगा और यमुना के बीच आदमी मंत्रमुग्ध-सा खड़ा रह जाता है कि ये कितनी समान हैं, फिर भी कितनी अलग। उनमें से किसी एक को चुनना बहुत मुश्किल है। ऐसी स्थानीय आभा से विश्ववाणी निकलती है। इनसे उबरने का एक रास्ता हो सकता है। दुनिया-भर की कौमों की किंवदंतियाँ और कहानियाँ इकठ्ठी की जाएँ, उसी खूबी और सच्चाई के साथ, और उनमें प्रयोजन या सीख डालने की कोशिश न की जाए। जो दुनिया का चक्कर लगाते हैं उनकी मनुष्य जाति के प्रति जिम्मेदारी होती है कि वे इनके बारे में जहाँ जाएँ, चर्चा करें। मिसाल के लिए हवाई द्वीप की मैडम पिलू की, जो अपनी उपस्थिति से दो-तीन दिन तक आदमी को मुग्ध कर लेती है, जो छूने की कोशिश करने पर अंतर्धान हो जाती है, जो चाहती है कि उसके क्रेटर में सिगरेट का धुआँ फेंका जाए और जो बदले में गंधक का धुआँ फेंकती है।

राम, कृष्ण और शिव भारत में पूर्णता के तीन महान स्वप्न हैं। सब का रास्ता अलग-अलग है। राम की पूर्णता मर्यादित व्यक्तित्व में है, कृष्ण की उन्मुक्त या संपूर्ण व्यक्तित्व में और शिव की असीमित व्यक्तित्व में लेकिन हरेक पूर्ण है। किसी एक का एक या दूसरे से अधिक या कम पूर्ण होने का कोई सवाल नहीं उठता। पूर्णता में विभेद कैसे हो सकता है? पूर्णता में केवल गुण और किस्म का विभेद होता है। हर आदमी अपनी पसंद कर सकता है या अपने जीवन के किसी विशेष क्षण से संबंधित गुण या पूर्णता चुन सकता है। कुछ लोगों के लिए यह भी संभव है कि पूर्णता की तीनों किस्में साथ-साथ चलें, मर्यादित, उन्मुक्त और असीमित व्यक्तित्व साथ-साथ रह सकते हैं। हिंदुस्तान के महान ऋषियों ने सचमुच इसकी कोशिश की है। वे शिव को राम के पास और कृष्ण को शिव के पास ले आए हैं और उन्होंने यमुना के तीर पर राम को होली खेलते बताया है। लोगों के पूर्णता के ये स्वप्न अलग किस्मों के होते हुए भी एक-दूसरे में घुल-मिल गए हैं, लेकिन अपना रूप भी अक्षुण्ण बनाए रखे हैं। राम और कृष्ण, विष्णु के दो मनुष्य रूप हैं जिनका अवतार धरती पर धर्म का नाश और अधर्म के बढ़ने पर होता है। राम धरती पर त्रेता में आए जब धर्म का रूप इतना अधिक नष्ट नहीं हुआ था। वह आठ कलाओं से बने थे, इसलिए मर्यादित पुरुष थे। कृष्ण द्वापर में आए जब अधर्म बढ़ती पर था। वे सोलहों कलाओं से बने हुए थे और इसलिए एक संपूर्ण पुरुष थे। जब विष्णु ने कृष्ण के रूप में अवतार लिया तो स्वर्ग में उनका सिंहासन बिल्कुल सूना था। लेकिन जब राम के रूप से आए तो विष्णु अंशत: स्वर्ग में थे और अंशत: धरती पर।

इन मर्यादित और उन्मुक्त पुरुषों के बारे में दो बहुमूल्य कहानियाँ कही जाती हैं। राम ने अपनी दृष्टि केवल एक महिला तक सीमित रखी, उस निगाह से किसी अन्य महिला की ओर कभी नहीं देखा। यह महिला सीता थी। उनकी कहानी बहुलांश राम की कहानी है जिनके काम सीता की शादी, अपहरण और कैद-मुक्ति और धरती (जिसकी वे पुत्री थी) की गोद में समा जाने के चारों ओर चलते हैं। जब सीता का अपहरण हुआ तो राम व्याकुल थे। वे रो-रो कर कंकड़, पत्थर और पेड़ों से पूछते थे कि क्या उन्होंने सीता को देखा है। चंद्रमा उन पर हँसता था। विष्णु को हजारों वर्ष तक चंद्रमा का हँसना याद रहा होगा। जब बाद में वे धरती पर कृष्ण के रूप में आए तो उनकी प्रेमिकाएँ असंख्य थीं। एक आधी रात को उन्होंने वृंदावन की सोलह हजार गोपियों के साथ रास नृत्य किया। यह महत्व की बात नहीं कि नृत्य में साठ या छह सौ गोपिकाएँ थीं और रासलीला में हर गोपी के साथ कृष्ण अलग-अलग नाचे। सबको थिरकानेवाला स्वयं अचल था। आनंद अटूट और अभेद्य था, उसमें तृष्णा नहीं थी। कृष्ण ने चंद्रमा को ताना दिया कि हँसो। चंद्रमा गंभीर था। इन बहुमूल्य कहानियों में मर्यादित और उन्मुक्त व्यक्तित्व का रूप पूरा उभरा है और वे संपूर्ण हैं।

सीता का अपहरण अपने में मनुष्य जाति की कहानियों की महानतम घटनाओं में से एक है। इसके बारे में छोटी-से-छोटी बात लिखी गई है। यह मर्यादित, नियंत्रित और वैधानिक अस्तित्व की कहानी है। निर्वासन काल के परिभ्रमण में एक मौके पर जब सीता अकेली छूट गई थी तो राम के छोटे भाई लक्ष्मण ने एक घेरा खींच कर सीता को उसके बाहर पैर न रखने के लिए कहा। राम का दुश्मन रावण उस समय तक अशक्त था जब तक कि एक विनम्र भिखमंगे के छद्मवेश में सीता को उसने उस घेरे के बाहर आने के लिए राजी नहीं कर लिया। मर्यादित पुरुष हमेशा नियमों के दायरे में रहता है।

उन्मुक्त पुरुष नियम और कानून को तभी तक मानता है जब तक उसकी इच्छा होती है और प्रशासन में कठिनाई पैदा होते ही उनका उल्लंघन करता है। राम के मर्यादित व्यक्तित्व के बारे में एक और बहुमूल्य कहानी है। उनके अधिकार के बार में, जो नियम और कानून से बँधे थे, जिनका उल्लंघन उन्होंने कभी नहीं किया और जिनके पूर्ण पालन के कारण उनके जीवन में तीन या चार धब्बे भी आए। राम और सीता अयोध्या वापस आ कर राजा और रानी की तरह रह रहे थे। एक धोबी ने कैद में सीता के बारे में शिकायत की। शिकायती केवल एक व्यक्ति था और शिकायत गंदी होने के साथ-साथ बेदम भी थी। लेकिन नियम था कि हर शिकायत के पीछे कोई न कोई दु:ख होता है और उसकी उचित दवा या सजा होनी चाहिए। इस मामले में सीता का निर्वासन ही एकमात्र इलाज था। नियम अविवेकपूर्ण था, सजा क्रूर थी और पूरी घटना एक कलंक थी जिसने राम को जीवन के शेष दिनों में दु:खी बनाया। लेकिन उन्होंने नियम का पालन किया, उसे बदला नहीं। वे पूर्ण मर्यादा पुरुष थे। नियम और कानून से बँधे हुए थे और अपने बेदाग जीवन में धब्बा लगने पर भी उसका पालन किया।

मर्यादा पुरुष होते हुए भी एक दूसरा रास्ता उनके लिए खुला था। सिंहासन त्याग कर वे सीता के साथ फिर प्रवास कर सकते थे। शायद उन्होंने यह सुझाव रखा भी हो, लेकिन उनकी प्रजा अनिच्छुक थी। उन्हें अपने आग्रह पर कायम रहना चाहिए था। प्रजा शायद नियम में ढिलाई करती या उसे खत्म कर देती। लेकिन कोई मर्यादित पुरुष नियमों का खत्म किया जाना पसंद नहीं करेगा जो विशेष काल में या किसी संकट से छुटकारा पाने के लिए किया जाता है। विशेषकर जब स्वयं उस व्यक्ति का उससे कुछ न कुछ संबंध हो। इतिहास और किंवदंती दोनों में अटकलबाजियों या क्या हुआ होता, इस सोच में समय नष्ट करना निरर्थक और नीरस है। राम ने क्या किया था, क्या कर सकते थे, यह एक मामूली अटकलबाजी है, इस बात की अपेक्षा कि उन्होंने नियम का यथावत पालन किया जो मर्यादित पुरुष की एक बड़ी निशानी है। आजकल व्यक्ति नेतृत्व और सामूहिक नेतृत्व के बारे में एक दिलचस्प बहस छिड़ी हुई है। व्यक्ति और सामूहिक नेतृत्व दोनों बुनियादी तौर पर उन्मुक्त व्यक्तित्व के वर्ग के हो सकते हैं जो नियम-कानून नहीं मानते। सारा फर्क इससे पड़ता है कि एक व्यक्ति नौ या पंद्रह व्यक्तियों का समूह अपने अधिकार के चारों ओर खींचे गए नियम के दायरे में रहता है या नहीं। एक व्यक्ति की अपेक्षा नौ व्यक्तियों के समूह के लिए मर्यादा तोड़ना अधिक कठिन होता है लेकिन जीवन एक निरंतर चाल है और हर तरह की परस्पर विरोधी शक्तियों की बदलती मात्रा के धुँधलकों में चलता रहता है।

इस क्रम में व्यक्ति और समूह की उन्मुक्तता में बराबर अदला-बदली चल रही है। संपूर्ण व्यक्ति संपूर्ण समूह के लिए जगह छोड़ता है और इसका उलटा भी होता है। लेकिन एक बड़ी अदला-बदली भी चलती रहती है जिसके चौखटे में व्यक्ति और समूह का आगे-पीछे होना लगा रहता है और वह है मर्यादित पुरुष और उन्मुक्त पुरुष के बीच अदला-बदली। राम मर्यादित पुरुष थे जैसे कि वास्तविक वैधानिक प्रंजातंत्र, कृष्ण एक उन्मुक्त पुरुष थे, लगभग वैसे ही जैसे नेताओं की उच्चस्तरीय समिति जो अपनी बुद्धि से हर नियम का अतिक्रमण करती है। यह एक उन्मुक्त समूह है। इन दो सवालों में, कि व्यक्ति या समूह के पास शक्ति है या कि अधिकार एक सीमा और दायरे में या खुला और छूटवाला है, दूसरा सवाल अधिक महत्वपूर्ण है। क्या अधिकार नियम और कानून के ऊपर चल सकता है, जब इस

बड़े सवाल का हल मिल जाएगा तक छोटा सवाल उठेगा कि मर्यादित अधिकारी व्यक्ति है या समूह। बेशक सर्वोत्तम अधिकारी मर्यादित समूह है।

राम मर्यादा पुरुष थे। ऐसा रहना उन्होंने जान-बूझ कर और चेतन रूप से चुना था। बेशक नियम और कानून आदेश पालन के लिए एक कसौटी थे। लेकिन यह बाहरी दबाव निरर्थक हो जाता यदि उसके साथ-साथ अंदरूनी प्रेरणा भी न होती। विधान के बाहरी नियंत्रण और मन की अंदरूनी मर्यादा एक-दूसरे को पुष्ट और मजबूत करते हैं। किसी भी प्रेरक की प्राथमिकता का तर्क देना निरर्थक होगा। किसी मर्यादित पुरुष के लिए विधान की बाहरी जंजीरें मन की अंदरूनी प्रेरणा का दूसरा नाम होंगी। मर्यादित पुरुष का काम दोनों में मेल-जोल और समानांतर का निर्णय करना है। मर्यादाएँ बाहरी नियंत्रण तो हैं ही लेकिन अंदरूनी सीमाओं को भी वे छूती हैं। मर्यादित नेतृत्व वास्तव में नियंत्रित नेतृत्व है लेकिन साथ-साथ वह मन के क्षेत्र में भी पहुँचता है। राम सचमुच एक नियंत्रित व्यक्ति थे लेकिन उनका केवल इतना ही वर्णन करना गलत होगा क्योंकि वे साथ-साथ मर्यादित पुरुष थे और नियम के दायरे में चलते थे।

रावण के आखिरी क्षणों के बारे में एक कहानी कही जाती है। अपने जमाने का निस्संदेह वह सर्वश्रेष्ठ विद्वान था। हालाँकि उसने अपनी विद्या का गलत प्रयोग किया, फिर भी बुरे उद्देश्य परे रख कर मनुष्य जाति के लिए उस विद्या का संचय आवश्यक था। इसलिए राम ने लक्ष्मण को रावण के पास अंतिम शिक्षा माँगने के लिए भेजा। रावण मौन रहा। लक्ष्मण वापस आए। उन्होंने अपने भाई से असफलता का बयान किया और इसे रावण का अहंकार बताया। जो हुआ था उसका पूरा ब्यौरा राम ने उनसे पूछा। तब पता लगा कि लक्ष्मण रावण के सिरहाने खड़े थे। लक्ष्मण पुन: भेजे गए कि रावण के पैताने खड़े हो कर निवेदन करें। फिर रावण ने राजनीति की शिक्षा दी।

शिष्टाचार की यह सुंदर कहानी अद्वितीय और अब तक की कहानियों में सर्वश्रेष्ठ है। शिष्टाचार निश्चय ही उतना महत्वपूर्ण है जितनी नैतिकता, क्योंकि व्यक्ति कैसे खाता है या चलता है, या उठता-बैठता है, या कैसा दीख पड़ता है, कैसे कपड़े पहनता है, अपने लोगों से कैसे बात करता है या उनके साथ कैसे रहता है, दूसरों की सुविधा का हमेशा खयाल रखता है या नहीं, या हर प्राणी से कैसे रहता है, यह शिष्टाचार का सवाल जरूर है, लेकिन किसी दूसरी चीज से कम महत्वपूर्ण नहीं। कृष्ण शिष्टाचार का सवाल जरूर है, लेकिन किसी दूसरी चीज से कम महत्वपूर्ण नहीं। कृष्ण शिष्टाचार के उतने बड़े नमूने थे जितना कोई मर्यादित पुरुष हो सकता है। उन्होंने सद्व्यवहारी पुरुष या स्थितप्रज्ञ व्यक्ति की परिभाषा दी है। ऐसा व्यक्ति अपने ऊपर वैसा नियंत्रण रखता है जैसे कछुआ अपने शरीर पर, अपने नियंत्रण के कारण जब चाहे अपने अंगों को समेट सकता है। असावधानी में कोई हरकत नहीं हो सकती। अन्य क्षेत्रों में चाहे जो भी भेद हो, लेकिन शिष्टाचार के क्षेत्र में सचमुच अपने निखरे रूप में उन्मुक्त पुरुष मर्यादित होता है। जो भी हो, मरणासन्न और श्रेष्ठ विद्वान के साथ शिष्टाचार की श्रेष्ठतम कहानी के रचयिता राम हैं।

राम अक्सर श्रोता रहते थे। न केवल उस व्यक्ति के साथ जिससे वे बातचीत करते थे, जैसा हर बड़ा आदमी करता है, बल्कि दूसरे लोगों की बातचीत के समय भी। एक बार तो परशुराम ने उन पर आरोप लगाया कि वह अपने छोटे भाई को बेरोक और बढ़-चढ़ कर बात करने देने के लिए जान-बूझ कर चुप लगाए थे। यह आरोप थोड़ा-बहुत सही भी है। अपने लोगों और उनके दुश्मनों के बीच होनेवाले वाद-विवाद में वे प्राय: एक दिलचस्पी लेनेवाले श्रोता के रूप में रहते थे। इसका परिणाम कभी-कभी बहुत भद्दा और दोषपूर्ण भी हो जाता था, जैसा लक्ष्मण और रावण की बहन शूर्पणखा के बीच हुआ। ऐसे मौकों पर राम दृढ़ पुरुष की तरह शांत और निष्पक्ष दीखते थे, कभी-कभी अपने लोगों की अति को रोकते थे और अक्सर उनकी ओर से या उन्हें बढ़ावा देते हुए एकाध शब्द बोल देते थे। यह एक चतुर

नीति भी कही जा सकती है। लेकिन निश्चय ही यह मर्यादित व्यक्ति की भी निशानी है जो अपनी बारी आए बिना नहीं बोलता और परिस्थिति के अनुसार दूसरों को बातचीत का अधिक से अधिक मौका देता है। कृष्ण बहुत वाचाल थे। वे सुनते भी थे। लेकिन वे सुनते केवल इसीलिए थे कि वे और दिलचस्प बात कर सकें। उनके रास्ते पर चलनेवालों को उनके शब्द आज भी जादू जैसे खींचते हैं। राम चुप्पी का जादू जानते थे, दूसरों को बोलने देते थे, जब तक कि उनके लिए जरूरी नहीं हो जाता था कि बात या काम के द्वारा हस्तक्षेप करें। राम मर्यादा पुरुष थे इसलिए अपनी चुप्पी और वाणी दोनों के लिए समान रूप से याद किए जाते हैं।

राम का जीवन बिना हड़पे हुए फलने की एक कहानी है। उनका निर्वासन देश को एक शक्तिकेंद्र के अंदर बाँधने का एक मौका था। इसके पहले प्रभुत्व के दो प्रतिस्पर्धी केंद्र थे - अयोध्या और लंका। अपने प्रवास में राम अयोध्या से दूर लंका की ओर गए। रास्ते में अनेक राज्य और राजधानियाँ पड़ीं जो एक अथवा दूसरे केंद्र के मातहत थीं। मर्यादित पुरुष की नीति-निपुणता की सबसे अच्छी अभिव्यक्ति तब हुई जब राम ने रावण के राज्यों में से एक बड़े राज्य को जीता। उसका राजा बालि था। बालि से उसके भाई सुग्रीव और उसके महान सेनापति हनुमान दोनों अप्रसन्न थे। वे रावण के मेलजोल से बाहर निकल कर राम की मित्रता और सेवा में आना चाहते थे। आगे चल कर हनुमान राम के अनन्य भक्त हुए, यहाँ तक कि एक बार उन्होंने अपना हृदय चीर कर दिखाया कि वहाँ राम के सिवा और कोई भी नहीं। राम ने पहली जीत को शालीनता और मर्यादित पुरुष की तरह निभाया। राज्य हड़पा नहीं, जैसे का तैसा रहने दिया। वहाँ के ऊँचे या छोटे पदों पर बाहरी लोग नहीं बैठाए गए। कुल इतना ही हुआ कि एक द्वंद्व में बालि की मृत्यु के बाद सुग्रीव राजा बनाए गए। बालि की मृत्यु भी राम के जीवन के कुछ धब्बों में एक है। राम एक पेड़ के पीछे छिपे खड़े थे और जब उनके मित्र सुग्रीव की हालत खराब हुई तो छिपे तौर पर उन्होंने बालि पर बाण चलाया। यह कानून का उल्लंघन था। कोई संस्कारी और मर्यादा पुरुष ऐसा कभी नहीं करता। लेकिन राम कह सकते थे कि उनके सामने मजबूरी थी।

प्रशा के फ्रेडरिक महान की तरह जो बहुत सफाई के साथ व्यक्ति और राज्य-नैतिकता में भेद करते थे और इस भेद के आधार पर एक झूठ अथवा/और वादाखिलाफी के जरिए आम हत्याकांड या गुलामी रोकने के पक्षपाती थे और इसीलिए उन्होंने ऐसे राजाओं को क्षमा किया जो संधियों के प्रति वफादार तो थे लेकिन जीवन में जिन्होंने एक बार कभी संधि तोड़ी। राम भी तर्क कर सकते थे कि उन्होंने एक व्यक्ति को, यद्यपि थोड़ा-बहुत गलत तरीके से, मार कर आम हत्याएँ रोकीं और उन्होंने अपने जीवन के केवल एक दुष्टतापूर्ण काम के जरिए एक समूचे राज्य को अच्छाई के रास्ते पर लगाया और अपने सिवाय किसी और क्रम में विघ्न नहीं डाला। स्वाभाविक था कि सुग्रीव अच्छाई के मेलजोल में आए और लंका विजय करने के लिए बाद में अपनी सारी सेना आदि दी। यह सही है कि वह सब कुछ बालि की मृत्यु से हासिल हुआ। राज्य पूर्ण रूप से स्वतंत्र रहा और राम से दोस्ती संभवत: वहाँ के नागरिकों की स्वतंत्र इच्छा से की गई। फिर भी तबीयत यह होती है कि कोई मर्यादा पुरुष, छोटा या बड़ा, नियम न तोड़े - अपने जीवन में एक बार भी नहीं।

बड़े और अच्छे शासन के लिए राम की बिना हड़पे हुए फैलाव की कहानी में, बिना साम्राज्यशाही के एकीकरण और राजनीति की भाग-दौड़ में मर्यादित रूप से काम करने आदि के साथ-साथ दुश्मन के खेमे में अच्छे दोस्तों की खोज चलती रही। उन्होंने लंका में इस क्रम को दोहराया। रावण के छोटे भाई विभीषण राम के दोस्त बने। लेकिन किष्किन्धा की कहानी दोहराई नहीं जा सकी। लंका में काम कठिन था, इसके दुर्गुण घोर और विद्वत्ता की बुनियाद पर बने थे। घनघोर युद्ध हुआ और बहुत-से लोग मारे गए। आगे चल कर विभीषण राजा बना और उसने रावण की पत्नी मंदोदरी को अपनी रानी बनया। लंका में भी अच्छाई का राज्य स्थापित हुआ। आज तक भी विभीषण का नाम जासूस, द्रोही,

पंचमाँगी और देश अथवा दल से गद्दारी करनेवाले का दूसरा रूप माना जाता है, विशेषकर राम के शक्ति-केंद्र अवध के चारों ओर। यह एक प्रशंसनीय और दिशाबोधक बात है कि कोई कवि विभीषण के दोष नहीं भूल सका। मर्यादा पुरुषोत्तम राम अपने मित्र को आम लोगों की नजर में स्वीकार्य नहीं बना सके और राम की मित्रता मिलने पर भी विभीषण का कलंक हमेशा बना रहा। मर्यादा पुरुष अपने मित्र को स्वीकार्य बनाने का चमत्कार नहीं कर सके। यह शायद मर्यादा पुरुष की निशानी हो कि अच्छाई जीती तो जरूर लेकिन एक ऐसे व्यक्ति के जरिए जीती जिसने द्रोह भी किया और इसलिए उसके नाम पर गद्दारी का दाग बराबर लगा रहे।

कृष्ण संपूर्ण पुरुष थे। उनके चेहरे पर मुस्कान और आनंद की छाप बराबर बनी रही और खराब से खराब हालत में भी उनकी आँखें मुस्कराती रहीं। चाहे दु:ख कितना ही बड़ा क्यों न हो, कोई भी ईमानदार आदमी वयस्क होने के बाद अपने पूरे जीवन में एक या दो बार से अधिक नहीं रोता। राम अपने पूरे वयस्क जीवन में दो या शायद केवल एक बार रोए। राम और कृष्ण के देश में ऐसे लोगों की भरमार है जिनकी आँखों में बराबर आँसू डबडबाए रहते हैं और अज्ञानी लोग उन्हें बहुत ही भावुक आदमी मान बैठते हैं। एक हद तक इसमें कृष्ण का दोष है। वे कभी नहीं रोए। लेकिन लाखों को आज तक रुलाते रहे हैं। जब वे जिन्दा थे, वृंदावन की गोपियाँ इतनी दु:खी थीं कि आज तक गीत गाए जाते हैं-

निसि दिन बरसत नैन हमारे
कंचुकि पट सूखत कबहूँ उर बिच बहत पनारे।

उनके रुदन में कामना की ललक भी झलकती है लेकिन साथ ही साथ इतना संपूर्ण आत्मसमर्पण है कि स्व का कोई अस्तित्व नहीं रह गया हो। कृष्ण एक महान प्रेमी थे जिन्हें अद्‌भुत आत्मसमर्पण मिलता रहा और आज तक लाखों स्त्री-पुरुष और स्त्री वेश में पुरुष, जो अपने प्रेमी को रिझाने के लिए स्त्रियों जैसा व्यवहार करते हैं, उनके नाम पर आँसू बहाते हैं और उनमें लीन होते हैं। यह अनुभव कभी-कभी राजनीति में आ जाता है और नपुंसकता के साथ-साथ जाल-फरेब शुरू हो जाता है।

जन्म से मृत्यु तक कृष्ण असाधारण, असंभव और अपूर्व थे। उनका जन्म अपने मामा की कैद में हुआ जहाँ उनके माता व पिता, जो एक मुखिया थे, बंद थे। उनसे पहले जन्मे भाई और बहन, पैदा होते ही मार डाले गए थे। एक झोली में छिपा कर वे कैद से बाहर ले जाए गए। उन्हें जमुना के पार ले जा कर सुरक्षित स्थान में रखना था। गहराई ने गहराई को खींचा, जमुना बढ़ी और जैसे-जैसे उनके पिता ने झोली ऊपर उठाई जमुना बढ़ती गई, जब तक कि कृष्ण ने अपने चरण कमल से नदी को छू नहीं लिया। कई दशकों के बाद उन्होंने अपना काम पूरा किया। उनके सभी परिचित मित्र या तो मारे गए या बिखर गए। कुछ हिमालय और स्वर्ग की ओर महाप्रयाण कर चुके थे। उनके कुनबे की औरतें डाकुओं द्वारा भगाई जा रही थीं। कृष्ण द्वारिका का रास्ता अकेले तय कर रहे थे। विश्राम करने वह थोड़ी देर के लिए एक पेड़ की छाँह में रुके। एक शिकारी ने उनके पैर को हिरन का शरीर समझ कर बाण चलाया और कृष्ण का अंत हो गया। उन्होंने उस क्षण क्या किया? क्या उनकी अंतिम दृष्टि करुणामयी मुस्कान के साथ, जो समझ से आती है, शिकारी पर पड़ी? क्या उन्होंने अपना हाथ बाँसुरी की ओर बढ़ाया जो अवश्य ही पास में रही होगी? और क्या उन्होंने बाँसुरी पर अंतिम दैवी आलाप छेड़ा? या मुस्कान के साथ हाथ में बाँसुरी ले कर ही संतुष्ट रहे? उनके दिमाग में क्या-क्या विचार आए? जीवन के खेल जो बड़े सुखमय, यद्यपि केवल लीला मात्र थे, या स्वर्ग से देवताओं की पुकार, जो अपने विष्णु के बिना अभाव महसूस कर रहे थे?

कृष्ण चोर, झूठे, मक्कार और खूनी थे। और वे एक पाप के बाद दूसरा पाप बिना रत्ती भर हिचक के करते थे। उन्होंने अपनी पोषक माँ का मक्खन चुराने से ले कर दूसरे की बीवी चुराने तक का काम किया। उन्होंने महाभारत के समय में एक ऐसे आदमी से आधा झूठ बुलवाया जो अपने जीवन में कभी झूठ नहीं बोला था। उनके अपने झूठ अनेक हैं। उन्होंने सूर्य को छिपा कर नकली सूर्यास्त किया ताकि उस गोधूलि में एक बड़ा शत्रु मारा जा सके। उसके बाद फिर सूरज निकला। वीर भीष्म, पितामह के सामने उन्होंने नपुंसक शिखंडी को खड़ा कर दिया ताकि वे बाण न चला सकें, और खुद सुरक्षित आड़ में रहे। उन्होंने अपने मित्र की मदद स्वयं अपनी बहन को भगाने में की।

लड़ाई के समय पाप और अनुचित काम के सिलसिले में कर्ण का रथ एक उदाहरण है। निश्चय ही कर्ण अपने समय में सेनाओं के बीच सबसे उदार आदमी था, शायद युद्धकौशल में भी सबसे निपुण था, और अकेले अर्जुन को परास्त कर देता। उसका रथ युद्धक्षेत्र में फँस गया। कृष्ण ने अर्जुन से बाण चलाने को कहा। कर्ण ने अनुचित व्यवहार की शिकायत की। इस समय महाभारत में एक अपूर्व वक्तृता हुई जिसका कहीं कोई जोड़ नहीं, न पहले न बाद में। कृष्ण ने कई घटनाओं की याद दिलाई और हर घटना के कवितामय वर्णन के अंत में पूछा, "तब तुम्हारा विवेक कहाँ था?" विवेक की इस धारा में कम से कम उस दौरान विवेक और आलोचना का दिमाग मंद पड़ जाता है। द्रौपदी का स्मरण हो आता है कि दुर्योधन के भरे दरबार में कैसे उसकी साड़ी उतारने की कोशिश की गई। वहाँ कर्ण बैठे थे और भीष्म भी, लेकिन उन्होंने दुर्योधन का नमक खाया था। यह कहा जाता है कि कुछ हद तक तो नमक खाने का असर जरूर होता है और नमक का हक अदा करने की जरूरत होती है। कृष्ण ने साड़ी का छोर अनंत बना दिया क्योंकि द्रौपदी ने उन्हें याद किया। उनके रिश्ते में कोमलता है, यद्यपि उसका वर्णन नहीं मिलता है।

कृष्ण के भक्त उनके हर काम के दूसरे पहलू पेश करके सफाई करने की कोशिश करते हैं। उन्होंने मक्खन की चोरी अपने मित्रों में बाँटने के लिए की। उन्होंने चोरी अपनी माँ को पहले तो खिझाने और फिर रिझाने के लिए की। उन्होंने मक्खन बाल-लीला के रूप को दिखाने के लिए चुराया, ताकि आनेवाली पीढ़ियों के बच्चे उस आदर्श-स्वप्न में पलें। उन्होंने अपने लिए कुछ भी नहीं किया, या माना भी जाए तो केवल इस हद तक कि जिनके लिए उन्होंने सब कुछ किया वे उनके अंश भी थे। उन्होंने राधा को चुराया, न तो अपने लिए और न राधा की खुशी के लिए, बल्कि इसलिए कि हर पीढ़ी की अनगिनत महिलाएँ अपनी सीमाएँ और बंधन तोड़ कर विश्व से रिश्ता जोड़ सकें। इस तरह की हर सफाई गैर-जरूरी है। दुनिया के महानतम ग्रंथ भगवद्गीता के रचयिता कृष्ण को कौन नहीं जानता? दुनिया में हिंदुस्तान एक अकेला देश है जहाँ दर्शन को संगीत के माध्यम से पेश किया गया है, जहाँ विचार बिना कहानी या कविता के रूप में परिवर्तित हुए गाए गए हैं। भारत के ऋषियों के अनुभव उपनिषदों में गाए गए हैं। कृष्ण ने उन्हें और शुद्ध रूप में निथारा। यद्यपि बाद के विद्वानों ने एक और दूसरे निथार के बीच विभेद करने की कितनी ही कोशिश की है। कृष्ण ने अपना विचार गीता के माध्यम से ध्वनित किया।

उन्होंने आत्मा के गीत गाए। आत्मा को न माननेवाले भी उनके शब्द चमत्कार में बह जाते हैं जब वह आत्मा को अनश्वर, जल और समीर की पहुँच से बाहर तथा शरीर बदले जानेवाले परिधान के रूप में वर्णन करते हैं। उन्होंने कर्म के गीत गाए और मनुष्य को, फल की अपेक्षा किए बिना, और उसका माध्यम या कारण बने बिना, निर्लिप्तता से कर्म में जुटे रहने के लिए कहा। उन्होंने समत्व, सुख और दु:ख, जीत या हार, गर्मी और सर्दी, लाभ या हानि और जीवन के अन्य उद्वेलनों के बीच स्थिर रहने के गीत गाए। हिंदुस्तान की भाषाएँ एक शब्द 'समत्वम्' के कारण बेजोड़ हैं, जिससे समता की भौतिक

परिस्थितियों और आंतरिक समता दोनों का बोध होता है। इच्छा होती है कि कृष्ण ने इसका विस्तार से बयान किया होता। ये एक सिक्के के दो पहलू हैं - समता समाज में लागू हो और समता व्यक्ति का गुण हो, जो अनेक में एक देख सके। भारत का कौन बच्चा विचार और संगीत की जादुई धुन में नहीं पला है! उनका औचित्य स्थापित करने की कोशिश करना उनके पूरे लालन-पालन की असलियत से इनकार करना है। एक मानी में कृष्ण आदमी को उदास करते हैं। उनकी हालत बिचारे हृदय की तरह है जो बिना थके अपने लिए नहीं बल्कि निरंतर दूसरे अंगों के लिए धड़कता रहता है। हृदय क्यों धड़के या दूसरे अंगों की आवश्यकता पर क्यों मजबूती या साहस पैदा करे? कृष्ण हृदय की तरह थे लेकिन उन्होंने आगे आनेवाली हर संतान में अपनी तरह होने की इच्छा पैदा की है। वे उस तरह के बन न सकें लेकिन इस प्रक्रिया में हत्या और छल करना सीख जाते हैं।

राम और कृष्ण पर तुलनात्मक दृष्टि डालने पर विचित्र बात देखने में आती है। कृष्ण हर मिनट में चमत्कार दिखाते थे। बाढ़ और सूर्यास्त आदि उनकी इच्छा के गुलाम थे। उन्होंने संभव और असंभव के बीच की रेखा को मिटा दिया था। राम ने कोई चमत्कार नहीं किया। यहाँ तक कि भारत और लंका के बीच का पुल भी एक-एक पत्थर जोड़ कर बनाया। भले ही उसके पहले समुद्र-पूजा की विधि करनी और बाद में धमकी देनी पड़ी। लेकिन दोनों के जीवन की संपूर्ण कृतियों की जाँच करने और लेखा मिलाने पर पता चलेगा कि राम ने अपूर्व चमत्कार किया और कृष्ण ने कुछ भी नहीं। एक महिला के साथ दोनों भाइयों ने अयोध्या और लंका के बीच २,००० मील की दूरी तय की। जब वे चले तो केवल तीन थे, जिनमें दो लड़ाई और एक व्यवस्था कर सकते थे। जब वे लौटे, एक साम्राज्य बना चुके थे। कृष्ण ने सिवा शासक वंश की एक शाखा से दूसरी को गद्दी दिलाने के और कोई परिवर्तन नहीं किया। यह एक पहेली है कि कम से कम राजनीति के दायरे में मर्यादा पुरुष महत्वपूर्ण और सार्थक, और उन्मुक्त या संपूर्ण पुरुष छोटा और निरर्थक साबित हुआ। यह काल की पहेली के समान ही है। घटनाहीन जीवन में हर क्षण भार बन जाता है और बर्दाश्त के बाहर लंबा लगता है। लेकिन एक दशक या एक जीवन में उसका संकलित विचार करने से सहज और जल्दी बीता हुआ लगता है। उत्तेजना के जीवन में एक क्षण मोहक लगता है और समय इच्छा के विपरीत तेजी से बीतता लगता है। पर साल-दो साल बाद पुनर्विचार करने पर भारी और धीर-धीरे बीता हुआ लगता है। मर्यादा के सर्वोच्च पुरुष, मर्यादा पुरुषोत्म राम ने राजनैतिक चमत्कार हासिल किया। पूर्णता के देव कृष्ण ने अपनी कृतियों से विश्व को चकाचौंध किया, जीवन के नियम सिखाए, जो किसी और ने नहीं किया था लेकिन उनके संपूर्ण व्यक्तित्व की राजनैतिक सफलता ठोस होने के बजाय बुलबुले जैसी है।

गाँधी राम के महान वंशज थे। आखिरी क्षण में उनकी जबान पर राम का नाम था। उन्होंने मर्यादा पुरुषोत्तम के ढाँचे में अपने जीवन को ढाला और देशवासियों का भी आह्वान किया। लेकिन उनमें कृष्ण की एक बड़ी और प्रभावशाली छाप दीखती है। उनके पत्र और भाषण, जब रोज या साप्ताहिक तौर पर सामने आते थे, तो एकसूत्रता में पिरोए लगते थे। लेकिन उनकी मृत्यु के बाद उन्हें पढ़ने पर विभिन्न परिस्थितियों में अर्थ और रुख परिवर्तन की नीति-कुशलता और चतुराई का पता चलता है। द्वारिका ने मथुरा का बदला चुकाया। द्वारिका का पूत जमुना के किनारे मारा और जलाया गया। हजारों साल पहले जमुना का पुत्र द्वारिका के पास मारा और जलाया गया था। लेकिन द्वारिका के यह पुत्र मर्यादा पुरुषोत्तम की ओर अभिमुख थे जो अपने जीवन को अयोध्या के ढाँचे में ढालने में बहुलांश में सफल भी हुए। फिर भी वह दोनों के विचित्र और बेजोड़ मिश्रण थे।

राम और कृष्ण ने मानवीय जीवन बिताया। लेकिन शिव बिना जन्म और बिना अंत के हैं। ईश्वर की तरह अनंत हैं लेकिन ईश्वर के विपरीत उनके जीवन की घटनाएँ समय क्रम में चलती हैं और विशेषताओं के साथ इसलिए वे ईश्वर से भी अधिक असीमित हैं। शायद केवल उनकी ही एकमात्र

किंवदंती है जिसकी कोई सीमा नहीं है। इस मामले में उनका मुकाबला कोई और नहीं कर सकता। जब उन्होंने प्रेम के देवता, काम के ऊपर तृतीय नेत्र खोला और उसे राख कर दिया तो कामदेव की धर्म-पत्नी और प्रेम की देवी, रति, रोती हुई उनके पास गई और अपने पति के पुनर्जीवन की याचना की। निस्संदेह कामदेव ने एक गंभीर अपराध किया था, क्योंकि उसने महादेव शिव को उद्विग्न करने की कोशिश की जो बिना नाम और रूप तथा तृष्णा के ही मन से ध्यानावस्थित होते हैं। कामदेव ने अपनी सीमा के बाहर प्रयास किया और उसका अंत हुआ। लेकिन हमेशा चहकनेवाली रति पहली बार विधवा रूप में होने के कारण उदास दीख पड़ी। दुनिया का भाग्य अधर में लटका था। रति क्रीड़ा अब के बाद बिना प्रेम के होनेवाली थी। शिव माफ नहीं कर सकते थे। उन्होंने सजा उचित दी लेकिन रति परेशान थी। दुनिया के भाग्य के ऊपर करुणा या रति की उदासी ने शिव को डिगा दिया। उन्होंने कामदेव को जीवन तो दिया लेकिन बिना शरीर के। तब से कामदेव निराकर है। बिना शरीर के काम हर जगह पहुँच कर प्रभाव डाल सकता है और घुल-मिल सकता है। ऐसा लगता है कि यह खेल शिव के ऊँचे पहाड़ी वासस्थान कैलाश पर हुआ होगा। मानसरोवर झील, जिसके पारदर्शी और निर्मल जल में हंस मोती चुगते हैं, और उतना ही महत्वपूर्ण, अथाह गहराई और अपूर्व छविवाले राक्षस ताल से लगा अजेय कैलाश, जहाँ बारहों महीने बर्फ जमी रहती है और जहाँ अखंड शांति का साम्राज्य छाया रहता है, हिंदू कथाओं के अनुसार धरती का सबसे रमणीक स्थल और केंद्रबिंदु है।

धर्म और राजनीति, ईश्वर और राष्ट्र या कौम हर जमाने में और हर जगह मिल कर चलते हैं। हिंदुस्तान में यह अधिक होता है। शिव के सबसे बड़े कारनामों में एक उनका पार्वती की मृत्यु पर शोक प्रकट करना है। मृत पार्वती का अंग-अंग गिरता रहा फिर भी शिव ने अंतिम अंग गिरने तक नहीं छोड़ा। किसी प्रेमी, देवता, असुर या किसी की भी साहचर्य निभाने की ऐसी पूर्ण और अनूठी कहानी नहीं मिलती। केवल इतना ही नहीं, शिव की यह कहानी हिंदुस्तान की अटूट और विलक्षण एकता की भी कहानी है। जहाँ पार्वती का एक अंग गिरा, वहाँ एक तीर्थ बना। बनारस में मणिकर्णिका घाट पर मणिकुंतल के साथ कान गिरा, जहाँ आज तक मृत व्यक्तियों को जलाए जाने पर निश्चित रूप से मुक्ति मिलने का विश्वास किया जाता है। हिंदुस्तान के पूर्वी किनारे पर कामरूप में एक हिस्सा गिरा जिसका पवित्र आकर्षण सैकड़ों पीढ़ियों तक चला आ रहा है और आज भी देश के भीतरी हिस्सों में बूढ़ी दादियाँ अपने बच्चों को पूरब की महिलाओं से बचने की चेतावनी देती हैं क्योंकि वे पुरुषों को मोह कर भेड़-बकरी बना देती हैं।

सर्जक ब्रह्मा और पालक विष्णु में एक बार बड़ाई-छुटाई पर झगड़ा हुआ। वे संहारक शिव के पास फैसले के लिए गए। उन्होंने दोनों को अपने छोर का पता लगाने के लिए कहा, एक को अपने सिर और दूसरे को पैर का, और कहा कि पता लगा कर पहले लौटनेवाला विजेता माना जाएगा। यह खोज सदियों तक चलती रही और दोनों निराश लौटे। शिव ने दोनों को अहंकार से बचने के लिए कहा। त्रिमूर्ति इस पर निर्णय कर खूब हँसे होंगे, और शायद दूसरे मौकों पर भी हँसते होंगे। विष्णु के बारे में यह बता देना जरूरी है, जैसा कोई दूसरी कहानियों से पता चलता है, कि वह भी अनंत निद्रा और अनंत आकार के माने जाते हैं जब तक शिव की लंबाई-चौड़ाई अनंत में तय न कर उसकी परिभाषा न दी जाए। एक दूसरी कहानी उनके दो पुत्रों के बीच की है जो एक खूबसूरत औरत के लिए झगड़ रहे थे। इस बार भी इनाम उसको मिलनेवाला था जो सारी दुनिया को पहले नाप लेगा। कार्तिकेय स्वास्थ्य और सौंदर्य की प्रतिमूर्ति थे और एक पल नष्ट किए बिना दौड़ पर निकल पड़े। हाथी की सूँडवाले गणेश, लंबोदर, बैठे सोचते और बहुत देर तक मुँह बनाए बैठे रहे। कुछ देर में उनको रास्ता सूझा और उनकी आँखों में शरारत चमकी, गणेश उठे और धीमे-धीमे अपने पिता के चारों ओर घूमे और निर्णय उनके पक्ष

में रहा। कथा के रूप में तो यह बिना सोचे और जल्दबाजी के बदले चिंतन, धीमे-धीमे सोच-विचार कर काम करने की सीख देती है। लेकिन मूल रूप से यह शिव की कथा है जो असीम हैं और साथ-साथ सात पगों में नापे जा सकते हैं। निस्संदेह, शरीर से भी शिव असीम हैं।

हाथी की सूँडवाले गणेश का अपूर्व चरित्र है, पिता के हस्तकौशल के अलावा अपनी मंद यद्यपि तीक्ष्ण बुद्धिमानी के कारण। जब वह छोटे थे, उनकी माता ने उन्हें स्नानगृह के दरवाजे पर देख-रेख करने और किसी को अंदर न आने देने के लिए कहा। प्रत्युत्पन्न क्रियावाले शिव उन्हें ढकेल कर अंदर जाने लगे, लेकिन आदेश से बँधे गणेश ने उन्हें रोका। पिता ने पुत्र का गला काट दिया। पार्वती को असीम वेदना हुई। उस रास्ते जो पहला जीव निकला वह एक हाथी था। शिव ने हाथी का सिर उड़ा दिया और गणेश के धड़ पर रख दिया। उस जमाने से आज तक गहरी बुद्धिवाले, मनुष्य की बुद्धि के साथ गज की स्वामी-भक्ति के रखनेवाले गणेश, हिंदू घरों में हर काम के शुरू में पूजे जाते हैं। उनकी पूजा से सफलता निश्चित हो जाती है। मुझे कभी-कभी विस्मय होता है कि क्या शिव ने इस मामले में अपने चरित्र के खिलाफ काम नहीं किया। क्या यह काम उचित था? हालाँकि उन्होंने गणेश को पुनर्जीवित किया और इस तरह व्याकुल पार्वती को दु:ख से छुटकारा दिया। लेकिन उस हाथी के बच्चे की माँ का क्या हाल हुआ होगा, जिसकी जान गई? लेकिन सवाल का जवाब खुद सवाल में ही मिल जाता है। नए गणेश से हाथी और पुराने गणेश दोनों में से कोई नहीं मरा। शाश्वत आनंद और बुद्धि का यह मेल कितना विचित्र है तथा हाथी और मनुष्य का मिश्रण कितना हास्यास्पद।

शिव का एक दूसरा भी काम है जिसका औचित्य साबित करना कठिन है। उन्होंने पार्वती के साथ नृत्य किया। एक-एक ताल पर पार्वती ने शिव को मात किया। तब उत्कर्ष आया। शिव ने एक थिरकन की और अपना पैर ऊपर उठाया। पार्वती स्तब्ध और विस्मयचकित खड़ी रहीं और वह नारी की मर्यादा के खिलाफ भंगिमा नहीं दर्शा सकीं। अपने पति के इस अनुचित काम पर आश्चर्य प्रकट करती खड़ी रहीं। लेकिन जीवन का नृत्य ऐसे उतार-चढ़ाव से बनता है कि जिसे दुनिया के नाक-भौं चढ़ानेवाले अभद्र कहते हैं और जिससे नारी की मर्यादा बनाने की बात कहते हैं। पता नहीं शिव ने शक्ति की भंगिमा एक मुकाबले में, जिसमें वह कमजोर पड़ रहे थे, जीत हासिल करने के लिए प्रदर्शित की या सचमुच जीवन के नृत्य के चढ़ाव में कदम-कदम बढ़ते हुए वे उद्वेलित हो उठे थे।

शिव ने कोई भी ऐसा काम नहीं किया जिसका औचित्य उस काम से ही न ठहराया जा सके। आदमी की जानकारी में वह इस तरह के अकेले प्राणी हैं जिनके काम का औचित्य अपने-आप में था। किसी की भी उस काम के पहले कारण और न बाद में किसी काम का नतीजा ढूँढ़ने की आवश्यकता पड़ी और न औचित्य ही ढूँढने की। जीवन कारण और कार्य की ऐसी लंबी श्रृंखला है कि देवता और मनुष्य दोनों को अपने कामों का औचित्य दूर तक जा कर ढूँढना होता है। यह एक खतरनाक बात है। अनुचित कामों को ठीक ठहराने के लिए चतुराई से भरे, खीझ पैदा करनेवाले तर्क पेश किए जाते हैं। इस तरह झूठ को सच, गुलामी को आजादी और हत्या को जीवन करार दिया जाता है। इस तरह के दुष्टतापूर्ण तर्कों का एकमात्र इलाज है शिव का विचार, क्योंकि वह तात्कालिकता के सिद्धांत का प्रतीक है। उनका हर काम स्वयं में तात्कालिक औचित्य से भरा होता है और उसके लिए किसी पहले या बाद के काम को देखने की जरूरत नहीं होती।

असीम तात्कालिकता की इस महान किंवदंती ने बड़प्पन के दो और स्वप्न दुनिया को दिए हैं। जब देवों और असुरों ने समुद्र मथा तो अमृत के पहले विष निकला। किसी को यह विष पीना था। शिव ने उस देवासुर संग्राम में कोई हिस्सा नहीं लिया और न तो समुद्र-मंथन के सम्मिलित प्रयास में ही। लेकिन कहानी बढ़ाने के लिए वे विषपान कर गए। उन्होंने अपनी गर्दन में विष को रोक रखा और तब से वे नीलकंठ के नाम से जाने जाते हैं। दूसरा स्वप्न हर जमाने में हर जगह पूजने योग्य है। जब एक

भक्त ने उनके बगल में पार्वती की पूजा करने से इनकार किया तो शिव ने आधा पुरुष आधा नारी, अर्धनारीश्वर रूप ग्रहण किया। मैंने आपाद-मस्तक इस रूप को अपने दिमाग में उतार पाने में दिक्कत महसूस की है, लेकिन उसमें बहुत आनंद मिलता है।

मेरा इरादा इन किंवदंतियों के क्रमश: ह्रास को दिखाने का नहीं है। शताब्दियों के बीच वे गिरावट का शिकार होती रही हैं। कभी-कभी ऐसा बीज जो समय पर निखरता है, वह विपरीत हालतों में सड़ भी जाता है। राम के भक्त समय-समय पर पत्नी निर्वासक, कृष्ण के भक्त दूसरों की बीवियाँ चुरानेवाले और शिव के भक्त अघोरपंथी हुए हैं। गिरावट और क्षतरूप की इस प्रक्रिया में मर्यादित पुरुष संकीर्ण हो जाता है, उन्मुक्त पुरुष दुराचारी हो जाता है, असीमित पुरुष प्रसंग-बद्ध और स्वरूपहीन हो जाता है। राम का गिरा हुआ रूप संकीर्ण व्यक्तित्व, कृष्ण का गिरा हुआ रूप दुराचारी व्यक्तित्व और शिव का गिरा हुआ रूप स्वरूपहीन व्यक्तित्व बन जाता है। राम के दो अस्तित्व हो जाते हैं, मर्यादित और संकीर्ण, कृष्ण के उन्मुक्त और क्षुद्र प्रेमी, शिव के असीमित और प्रसंगबद्ध। मैं कोई इलाज सुझाने की धृष्टता नहीं करूँगा और केवल इतना कहूँगा : ऐ भारतमाता, हमें शिव का मस्तिष्क दो, कृष्ण का हृदय दो तथा राम का कर्म और वचन दो। हमें असीम मस्तिष्क और उन्मुक्त हृदय के साथ-साथ जीवन की मर्यादा से रचो।

श्री दुर्गाष्टोत्तर शतनाम स्तोत्र

हिंदी काव्यानुवाद

संजीव वर्मा 'सलिल'

(नवदुर्गा पर्व पर विशेष)

शिव बोले: 'हे पद्ममुखी! मैं कहता नाम एक सौ आठ।
दुर्गा देवी हों प्रसन्न नित सुनकर जिनका सुमधुर पाठ।१।
ओम सती साध्वी भवप्रीता भवमोचनी भवानी धन्य।
आर्या दुर्गा विजया आद्या शूलवती तीनाक्ष अनन्य।२।
पिनाकिनी चित्रा चंद्रघंटा, महातपा शुभरूपा आप्त।
अहं बुद्धि मन चित्त चेतना, चिता चिन्मया दर्शन प्राप्त।३।
सब मंत्रों में सत्ता जिनकी, सत्यानंद स्वरूपा दिव्य।
भाएँ भाव-भावना अनगिन, भव्य-अभव्य सदागति नव्य।४।
शंभुप्रिया सुरमाता चिंता, रत्नप्रिया हों सदा प्रसन्न।
विद्यामयी दक्षतनया हे!, दक्षयज्ञ ध्वंसा आसन्न।५।
देवि अपर्णा अनेकवर्णा पाटल वदना-वसना मोह।
अंबर पट परिधानधारिणी, मंजरि रंजनी विहँसें सोह।६।

अतिपराक्रमी निर्मम सुंदर, सुर-सुंदरियाँ भी हों मात।
मुनि मतंग पूजित मातंगी, वनदुर्गा दें दर्शन प्रात।७।
ब्राम्ही माहेशी कौमारी, ऐंद्री विष्णुमयी जगवंद्य।
चामुंडा वाराही लक्ष्मी, पुरुष आकृति धरें अनिंद्य।८।
उत्कर्षिणी निर्मला ज्ञानी, नित्या क्रिया बुद्धिदा श्रेष्ठ ।
बहुरूपा बहुप्रेमा मैया, सब वाहन वाहना सुज्येष्ठ।९।
शुंभ-निशुंभ हननकर्त्री हे!, महिषासुरमर्दिनी प्रणम्य।
मधु-कैटभ राक्षसद्वय मारे, चंड-मुंड वध किया सुरम्य।१०।
सब असुरों का नाश किया हँस, सभी दानवों का कर घात।
सब शास्त्रों की ज्ञाता सत्या, सब अस्त्रों को धारें मात।११।
अगणित शस्त्र लिये हाथों में, अस्त्र अनेक लिये साकार।
सुकुमारी कन्या किशोरवय, युवती यति जीवन-आधार।१२।
प्रौढ़ा नहीं किंतु हो प्रौढ़ा, वृद्धा माँ कर शांति प्रदान।
महोदरी उन्मुक्त केशमय, घोररूपिणी बली महान।१३।
अग्नि-ज्वाल सम रौद्रमुखी छवि, कालरात्रि तापसी प्रणाम।
नारायणी भद्रकाली हे!, हरि-माया जलोदरी नाम।१४।
तुम्हीं कराली शिवदूती हो, परमेश्वरी अनंता द्रव्य।
हे सावित्री! कात्यायनी हे!, प्रत्यक्षा विधिवादिनी श्रव्य।१५।
दुर्गानाम शताष्टक का जो, प्रति दिन करें सश्रद्धा पाठ।
देवि! न उनको कुछ असाध्य हो, सब लोकों में उनके ठाठ।१६।
मिले अन्न धन वामा सुत भी, हाथी-घोड़े बँधते द्वार।
सहज साध्य पुरुषार्थ चार हो, मिले मुक्ति होता उद्धार।१७।
करें कुमारी पूजन पहले, फिर सुरेश्वरी का कर ध्यान।
पराभक्ति सह पूजन कर फिर, अष्टोत्तर शत नाम ।१८।
पाठ करें नित सदय देव सब, होते पल-पल सदा सहाय।
राजा भी हों सेवक उसके, राज्य लक्ष्मी प् वह हर्षाय।१९।
गोरोचन, आलक्तक, कुंकुम, मधु, घी, पय, सिंदूर, कपूर।
मिला यंत्र लिख जो सुविज्ञ जन, पूजे हों शिव रूप जरूर।२०।
भौम अमावस अर्ध रात्रि में, चंद्र शतभिषा हो नक्षत्र।
स्तोत्र पढ़ें लिख मिले संपदा, परम न होती जो अन्यत्र।२१।

।।इति श्री विश्वसार तंत्रे दुर्गाष्टोत्तर शतनाम स्तोत्र समाप्त।।

डॉ. स्नेह ठाकुर का रचना संसार

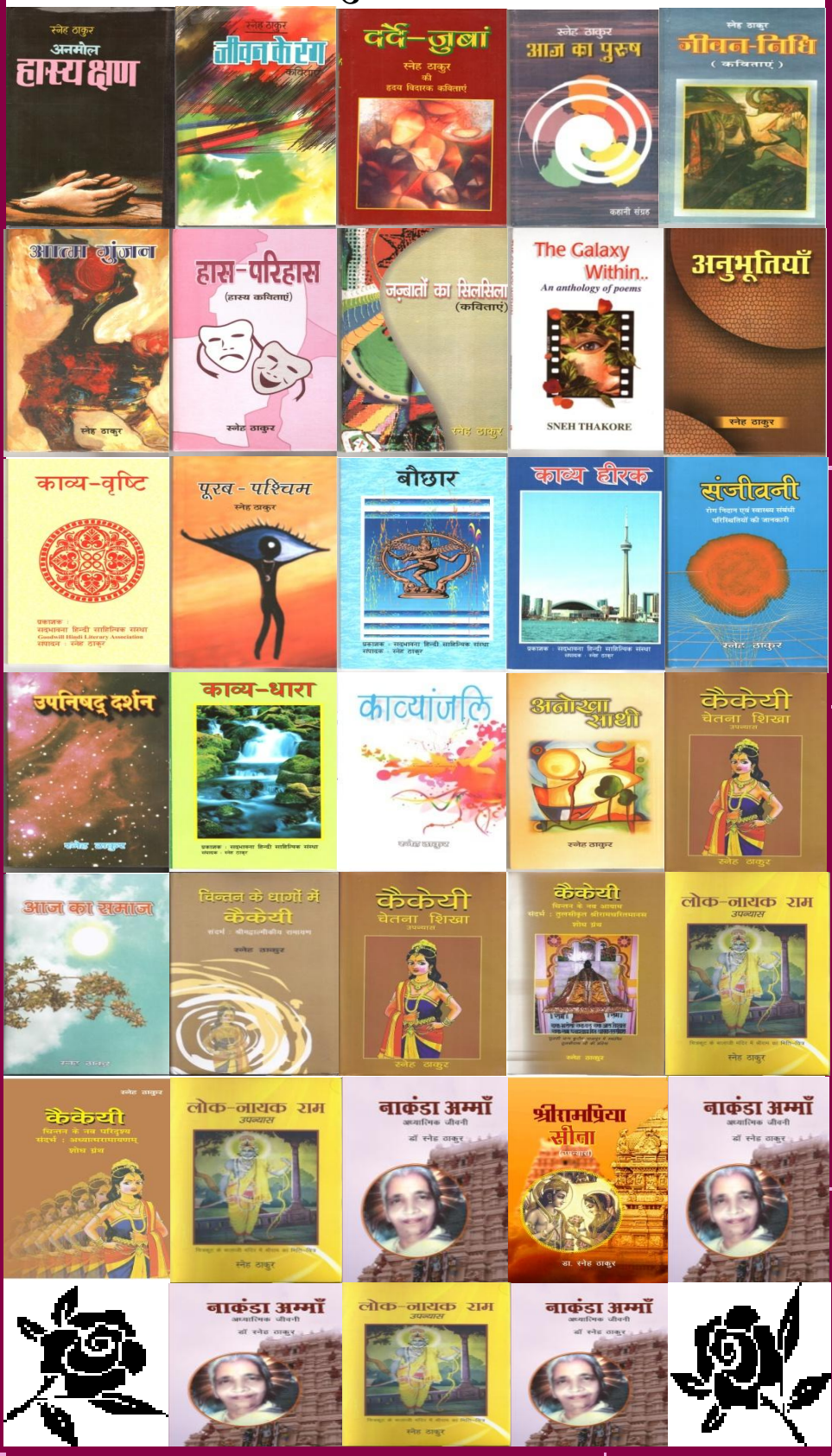

डॉ. स्नेह ठाकुर की प्रकाशित पुस्तकें

नाकंडा अम्माँ	(अध्यात्मिक जीवनी, चतुर्थ संस्करण)
लोक-नायक राम	(उपन्यास, तृतीय संस्करण)
नाकंडा अम्माँ	(अध्यात्मिक जीवनी, तृतीय संस्करण)
नाकंडा अम्माँ	(अध्यात्मिक जीवनी, द्वितीय संस्करण)
श्रीरामप्रिया सीता	(उपन्यास)
नाकंडा अम्मा	(अध्यात्मिक जीवनी)
लोक-नायक राम	(उपन्यास, द्वितीय संस्करण)
कैकेयी : चिन्तन के नव परिदृश्य - संदर्भ : अध्यात्मरामायण	(शोध-ग्रन्थ)
लोक-नायक राम	(उपन्यास)
कैकेयी : चिन्तन के नव आयाम - संदर्भ : तुलसीकृत श्रीरामचरितमानस	(शोध-ग्रन्थ)
कैकेयी : चेतना-शिखा	(उपन्यास, साहित्य अकादमी म. प्र. अखिल भारतीय 'वीरसिंह देव' पुरस्कार सम्मान, द्वितीय संस्करण)
चिन्तन के धागों में कैकेयी - संदर्भ : श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण	(शोध-ग्रन्थ)
आज का समाज	(सामाजिक लेख-संग्रह)
कैकेयी : चेतना-शिखा	(उपन्यास, राष्ट्रपति भवन पुस्तकालय में संग्रहित)
अनोखा साथी	(कहानी-संग्रह)
काव्यांजलि	(काव्य-संग्रह)
काव्य-धारा	(संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
उपनिषद दर्शन	(दार्शनिक एवं अध्यात्मिक)
संजीवनी	(स्वास्थ्य सम्बन्धी आलेख)
काव्य हीरक	(संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
बौछार	(संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
पूरब-पश्चिम	(आप्रवासी सम्बन्धित आलेख संग्रह)
काव्य-वृष्टि	(संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
अनुभूतियाँ	(काव्य-संग्रह)
The Galaxy Within	(A collection of English poems)
ज़ज़्बातों का सिलसिला	(काव्य-संग्रह)
हास-परिहास	(हास्य कविताएँ)
आत्म-गुंजन	(आध्यात्मिक-दार्शनिक गीत)
जीवन-निधि	(काव्य-संग्रह)
आज का पुरुष	(कहानी-संग्रह)
दर्दे-जुबाँ	(नज़्म व ग़ज़ल संग्रह)
जीवन के रंग	(काव्य-संग्रह)
अनमोल हास्य क्षण	(नाटक-संग्रह, फेडरल गवर्नमेन्ट, कैनेडा द्वारा अधिकतम अनुदान से सम्मानित)

प्रकाशक व वितरक

स्टार पब्लिकेशंज़ (प्रा.) लि.
४/५ बी., आसफ अली रोड
नई दिल्ली - ११०००२, भारत
Star Publishers' Distributors
55, Warren Street
LONDON – W1T 5NW, England

दिल्ली प्रेस की सरिता व अन्य राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में भी रचनाएँ प्रकाशित